ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 20 सितंबर 2015 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 20 सितंबर 2015 से 26 सितंबर 2015

मा.शु. –07 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 38, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. कोटा में लोकायुक्त कोठारी का हुआ अभिनन्दन समारोह

"महर्षि दयानंद के विचारों से होगा मानव जाति का उत्कर्ष उन जैसे महापुरुषों के आगमन की प्रतीक्षा सम्पूर्ण मानव जाति कर रही थी। वैदिक धर्म और वैदिक सभ्यता के प्रचार के साथ कुरीतियों के उन्मूलन के संबंध में उनके द्वारा जो विचार रखे गये, वे हमारे लिए अनमोल हैं। उनके विचारों को अपनाने से ही मानव जाति उत्कर्ष की ओर अग्रसर हो सकती है–'' यह बात लोकायुक्त सज्जनसिंह कोठारी ने डी.ए.वी. स्कूल कोटा में आयोजित पौधारोपण कार्यक्रम में पधारने पर अभिनन्दन कार्यक्रम के दौरान कही।

कार्यक्रम की अध्यक्षता आर्य समाज के जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्डा ने की तथा विशिष्ठ अतिथि डी.ए.वी. लोकल मैनेजमेंट कमेटी के सदस्य डॉ. वेदप्रकाश गुप्ता थे।

कार्यक्रम को संबोधित करते हुए कोठारी ने कहा कि महर्षि दयानन्द के लिए मेरे मन में भक्ति और श्रद्धा का भाव है। मेरे अन्दर जो भी अच्छाईयां हैं, उनका श्रेय महर्षि के विचारों और उनके बताए मार्ग को जाता है।

छात्र–छात्राओं के लिए संदेश देते हुए श्री कोठारी ने कहा कि युवा पीढी देश की धरोहर है। बच्चों के दृष्टिकोण को वैज्ञानिक बनाना होगा। पारंपरिक बातों को भी वैज्ञानिक कसोटी पर रखकर बच्चों को समझाना चाहिए। आर्य समाज के सिद्धान्त यदि तार्किक तरीके से बच्चों को समझाएं तो उन्हें आजीवन वे याद रखते हैं। कार्यक्रम के अंत में डी.ए.वी. स्कूल की प्राचार्य श्रीमती रंजना ने मुख्य अतिथि व सभी अतिथियों का अभार व्यक्त किया।

आर्य अनाथालय फिरोजपुर छावनी ने मनाया श्रावणी पर्व

आर्य अनाथलय फिरोजपुर छावनी के प्रांगण में रक्षाबन्धन का पवन श्रावणी पर्व आदरणीय सरदार परमिन्दर सिंह पिंकी, जी एम.एल.ए. फिरोजपुर शहरी की अध्यक्षता में बडे धूम–धाम से मनाया गया। स. परमिन्दर सिंह पिंकी जी अपने अनेकों कार्य कर्ताओं के साथ बच्चों को आशीर्वाद देने पहुँचे। इस अवसर पर आश्रम के बच्चों ने हर्षोल्लास के साथ स्वागत एवं राखी गीत प्रस्तुत किए और नन्हे मुन्ने बालक एवं बालिकाओं ने समूह नृत्य और योगासन प्रस्तुत कर सबका मन मोह लिया। श्री सरदार परमिन्दर सिंह पिंकी जी ने बच्चों की सुविधाओं का ध्यान रखते हुए आर्थिक सहायता की घोषणा की। इस अवसर पर शहर के जाने माने सज्जनों ने बच्चों को आशीर्वाद प्रदान किया। जिसमें पं. सुतीश शर्मा, एडवोकेट, प्रि. अशोक पाल शर्मा, प्रि. वीना शर्मा प्रि. राज गोयल, प्रि. सुश्री मधुरिता शामिल रहे।

प्रबन्धक डॉ. सतनाम कौर ने अपने भाषण में कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित यह अनाथालय 1877 ये अब तक 140 वर्षों से बच्चों की सेवा, वपालन–पोषण में जुटा हुआ हैं। वर्तमान समय में 130 बच्चे नि:शुल्क जीवन सुविधाओं का लाभ प्राप्त कर अपना भविष्य निर्माण कर रहें हैं। इन्हें भोजन, वस्त्र आवास, शिक्षा, औषधि, आदि का प्रबन्ध दानी सज्जनों द्वारा दिये गए दान से ही संभव हो पा रहा है। आश्रम के सभी बच्चे स्कूल, कॉलेज में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

भाजपा अध्यक्ष श्री कमल शर्मा भी अपने कार्यकर्ताओं के साथ आश्रम में पधारे और आर्य अनाथालय की कन्याओं से राखी बन्धवाई।

अन्त में प्रबन्धक ने आर्य रत्न माननीय श्री पूनम सूरी जी प्रधान, तथा अन्य पदाधिकारियों की प्रेरणा का कृतज्ञता पूर्वक स्मरण किया।

सीमांत क्षेत्र में प्रथम ब्रिटिश कौंसिल अन्तर्राष्ट्रीय स्कूल अवार्ड डी.ए.वी. नेष्टा अटारी ने हासिल किया

सीमांत क्षेत्र में स्थित महंत कौशल दास डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल नेष्टा अटारी ने अपने प्रथम प्रयास में ही ब्रिटिश कौंसिल के द्वारा रखे गए सभी आयामों को क्रियान्वित करते हुए सीमांत क्षेत्र में पहला अन्तर्राष्ट्रीय स्कूलस अवार्ड प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त किया। इस वर्ष सम्पूर्ण विश्व के लगभग 300 विद्यालयों को इस सम्मान से सम्मानित किया गया और समारोह के दौरान सीमांत क्षेत्र में स्थित इस विद्यालय के विषय में विशेष टिप्पणी भी दी गई– ''सीमांत क्षेत्र में स्थित इस विद्यालय ने अपनी कार्यशैली से यह प्रमाणित कर दिया है कि प्रतिभा किसी क्षेत्र विशेष की धरोहर नहीं होती।'' सीमांत क्षेत्र में पूरे विश्व में यह प्रथम अवार्ड है जो इस विद्यालय को प्रदान किया जा रहा है। विद्यालय के प्राचार्य ने कहा इन गौरवान्वित क्षणों में हम अनुभव करते हैं। कि सेन्टर ऑफ अकैडेमिक एकसेलेंस, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकृत्रि समिति नई दिल्ली के निर्देशन में एवं स्थानीय प्रबंधक कमेटी के नेतृत्व में यह सम्मान डी.ए.वी. संस्था को प्राप्त हुआ। स्वामी दयानंद के संदेशानुसार हमें समस्त विश्व के साथ उनके पदचिह्नों पर चलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ७

संपादक – पूनम सूरी

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार 20 सितंबर, 2015 से 26 सितंबर, 2015

हे सोम! हृदय–कलश में प्रवेश करो

● **डॉ. रामनाथ वेदालंकार**

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरितातिं पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।

ऋग् ९.७०.९

ऋषिः **रेणुः वैश्वामित्रः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **जगती**।

● **(सोम)** हे सोम परमात्मन्! **(तू)**, **(वृषा)** वर्षक **(होता हुआ)**, **(देववीतये)** दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, **(पवस्य)** प्रवाहित हो, **(इन्द्रस्य)** आत्मा के, **(हार्दि)** हृदय–रूप, **(सोमधानं)** सोम–कलश में, **(आविश)** प्रविष्ट हो।, **(बाधात्)** बाधे जाने से, **(पुरा)** पहले, **(नः)** हमें, **(दुरिता अति)** पापचरणों से लंघाकर, **(पारय)** पार करदे। **(क्षेत्रवित्)** मार्ग का ज्ञाता, **(विपृच्छते)** विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, **(दिशः)** दिशाओं को, **(आह हि)** बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करनेवाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय–रूप सोम–कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम–पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी–कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप–भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप–कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप–मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप–ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार–रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछनेवाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा–ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन–पोत भव–सागर में डूबकर नष्ट–भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचाओ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भक्त और भगवान

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में बात हो रही थी मन क्या है? कितना सुन्दर है वह! कितना आकर्षक! कितना मनमोहन! ज्योतियों की महाज्योति! इतनी विशाल और स्वाभाविक कि सूर्य, चन्द्रमा, तारे, किसी का प्रकाश वैसा नहीं! तेज चमकती हुई विद्युत् उसके समक्ष फीकी है। उसकी ज्योति से ही ज्योतिवाले ज्योति पाते हैं।

इस परम ज्योतिवाले को पाने के लिए मनुष्य को यह शरीर मिला, नहीं तो यह शरीर व्यर्थ है, यह जीवन निरर्थक है। वह तो साधन है केवल ज्ञान, कर्म और उपासना के लिए। और ज्ञान, कर्म, उपासना साधन है प्रभु दर्शन के लिए। मानव जीवन का वास्तविक उद्देश्य भी यही है।

इसी शरीर में प्रभु का दर्शन होता है। आत्मा कहता है "सारे विश्व को छोड़कर मैं मनुष्य के शरीर में आया हूँ कि उस परम सत्य को देख सकूँ जिसमें मोक्ष के आनन्द को भोगते हुए योगी लोग विचरते हैं– ऐसा है यह शरीर।" वास्तव में इससे प्रभु का दर्शन होता है। स्वामी जी ने कहानी सुनाते हुए कहा कि यह शरीर मोटर की भांति है। यदि लक्ष्य भूल गए और लक्ष्य पर नहीं पहुँचे तो यह मोटर पुनः नहीं मिलेगी।

अब आगे...

एक थे सज्जन जीवनराम। ये सेठ ज्योतिस्वरूप के पड़ोस में रहते थे– एक झोंपड़े में। उन्हें पता लगा कि सेठ के बहुत–से उत्तम मकान हैं। उनके पास जाकर बोले, ''अमुक मकान मुझे दे दीजिये, मैं वहाँ निर्धन बच्चों के लिए पाठशाला आरम्भ करूँगा, एक निःशुल्क औषधालय बनाऊँगा। प्रतिदिन सत्संग होगा वहाँ, आध्यात्मिक कथाएँ होंगी, यज्ञ होगा। जो भी किराया आप माँगेंगे मैं दे दूँगा।'' ज्योतिस्वरूप बोले– ''तुम तो बहुत अच्छे व्यक्ति हो। इतने श्रेष्ठ काम तुम मेरे मकान में करोगे तो मैं निःशुल्क दूँगा, किराया नहीं लूँगा। तुम मकान को स्वच्छ रक्खो। ये उत्तम काम करो। मुझे किराये की आवश्यकता नहीं।"

जीवनराम पहुँचे उस मकान में। वहाँ रहने लगे। आरम्भ में उन्होंने मकान को स्वच्छ रक्खा, परन्तु कुछ ही दिन व्यतीत हुए थे कि जीवनराम के कुछ जुआरी मित्र आ गये। पहले ताश शुरू हुआ। फिर जुआ खेला जाने लगा। प्रतिदिन जुआ होता, तो शराब भी उड़ने लगी। धीरे–धीरे वह मकान डाकुओं का अड्डा बन गया। हर प्रकार के पाप वहाँ होने लगे। किसी ने ज्योतिस्वरूप से शिकायत की, ''सेठ साहब! जो मकान आपने यज्ञ और सत्संग के लिए दिया था, वह तो डाकुओं का अड्डा बन गया है।'' ज्योतिस्वरूप बोले, ''ऐसी बात है?'' शिकायत करने वाले ने कहा, ''जी! मैं अपनी आँखों से देखकर आया हूँ।'' ज्योतिस्वरूप ने अपने छोटे मुनीम को बुलाया; कहा ''जीवनराम से कहो कि मकान खाली कर दे, हमने पाप के लिए यह मकान नहीं दिया था।'' छोटे मुनीम जीवनराम के पास पहुँचे। जीवनराम ने कुछ अनुनय–विनय की। कुछ मुनीम साहब का हाथ गर्म कर दिया। उन्होंने जाकर रिपोर्ट दे दी कि ''सब ठीक है। किसी ने अनुचित शिकायत कर दी थी।'' परन्तु अभी बहुत देर नहीं हुई थी कि सेठ के पास पुनः शिकायत पहुँची। अबके उन्होंने बड़े मुनीम को भेजा। जीवनराम ने बड़े मुनीम की भी अनुनय–विनय की। उसके पाँव पड़ा। प्रतिज्ञा की कि वह अपना सुधार करेगा। बड़े मुनीम ने यह सारी रिपोर्ट दे दी। सेठ ज्योतिस्वरूप बोले, ''बात बड़ी बुरी है परन्तु, यदि वह सुधार चाहता है तो उसे कुछ समय देना चाहिए।'' दिया गया समय। परन्तु फिर शिकायत आई कि जीवनराम के लक्षण पहले से भी बुरे हुए जाते हैं। अबके सेठ ने अपने बेटे को भेजा। जीवनराम ने उसे भी धोखा देने का प्रयत्न किया, परन्तु वह धोखे में नहीं आया। वकील से नोटिस दिला दिया कि 'मकान खाली करो'। जीवनराम ने नोटिस लिया ही नहीं। मुकद्दमा हुआ। वारण्ट जारी हुए। पुलिस पहुँची तो जीवनराम ने उसको भी रिश्वत देने का प्रयत्न किया। परन्तु अब कोई चाल चली नहीं। रोया–चिल्लाया, अन्त में मकान छोड़ना पड़ा।

यह जीवनराम है आत्मा; ज्योतिःस्वरूप है ईश्वर; मकान है शरीर। इस मकान का कोई किराया नही। इसलिए मिला यह मकान कि ज्ञान के द्वारा कर्म, कर्म द्वारा उपासना और उपासना द्वारा प्रभु का दर्शन करो। उसके स्थान पर बना दिया इसको पापों का अड्डा। तब छोटा मुनीम आया–कोई छोटी बीमारी, छोटी दुघर्टना। बड़ा मुनीम है

ानिक बड़ा रोग। सेठ का लड़का है अधिक ायानक रोग। नोटिस है हृदय की दुर्बलता, न्तड़ियों का कार्य न करना, आँखों में ोतियाबिन्द उतरना, कानों से कम सुनाई ना। नर्वस ब्रेकडाउन मुकद्दमा है। अन्तिम ोग वारण्ट है। पुलिस है मृत्यु। वह आ ाय तो फिर औषधियों की रिश्वत नहीं लती। डॉक्टरों को दी हुई फ़ीस के रूप खुशामद नहीं चलती। तब जीवनराम को ह मकान छोड़ना ही पड़ता है।

हम इस कहानी को प्रतिदिन सुनते । आँखों के समक्ष देखते हैं। देखते हैं के जीवनराम मतवाला हो गया। देखते कि उसके पास छोटा मुनीम आया है। ड़ा मुनीम आया है। सेठ का बेटा आया । नोटिस आया है। अन्त में वारण्ट लेकर ुलिस आई है। देखते हैं कि वह मकान ोड़ रहा है पुकारता हुआ कि–

मैं फूल चुनने आया था बाग़े–हयात
(जीवन–वाटिका) **में।**
दामन (पल्लू) **को ख़ार–ज़ार** (काँटे) **में**
उलझा के रह गया।।

फिर भी समझते नहीं कि यह मकान किसलिए मिला था। बहुत–से आविष्कार हम करते हैं। विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ते हैं। बुरा नहीं यह आगे बढ़ना। परन्तु ये पग जो हम उठाते हैं उसे केवल विज्ञान के क्षेत्र में आगे जाने के लिए नहीं अपितु ईश्वर से विमुख होने के लिए; साधन को लक्ष्य बनाकर हम वास्तविकता को भूल जाते हैं। विज्ञान की दौड़ में हमने ज्ञान को, वेद को भुला दिया है। देखिये, यह सूर्य इसलिए है कि हमारी आँखें देख सकें। ईश्वर ने सूर्य को पहले बनाया, पृथिवी को बाद में, ताकि किसी के लिए अन्धकार न रहे। इसी प्रकार सृष्टि के आदि में वेद का ज्ञान इसलिए दिया कि मनुष्य का मन ईश्वर की ओर जाने का मार्ग पा सके। ईश्वर–दर्शन ही मनुष्य के जीवन का लक्ष्य है और इस लक्ष्य की ओर जाने वाले मार्ग को दिखाना ही वेद का मुख्य उद्देश्य है। महर्षि दयानन्द ने भी ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका' में कहा–

एवमेव सर्वेषां वेदानां ईश्वरेति मुख्यार्थः।

''सब वेदों का मुख्य अर्थ, सबसे बड़ा उद्देश्य ईश्वर है।''

इसका अर्थ यह नहीं कि वेद में दूसरी विद्याएँ नहीं। सब सत्य विद्याओं का और उन विद्याओं से जो कुछ भी जाना जा सकता है उन सबका मूल वेद है। वेद में प्रकृति का ज्ञान भी है, विज्ञान भी है, कर्म–काण्ड भी है, प्रत्येक प्रकार की वस्तु विद्यमान है। इन बातों से संसार ने बार–बार लाभ ही उठाया है। विज्ञान का जो युग आज हम देखते हैं, ऐसे युग पहले भी कई बार आ चुके हैं। प्रत्येक कलियुग के पश्चात् सतयुग आया है, प्रत्येक सतयुग के पश्चात् त्रेता और द्वापर। इसी प्रकार कभी प्रकृति–विज्ञान चोटी पर पहुँचता है, कभी आत्मविज्ञान। यह संसार एक चक्र की भाँति चलता है। जर्मन के विद्वान् नेपाल से कई पुस्तकें ले गए। उनकी सहायता से उन्होंने रंग के कारखाने स्थापित किए। वायुयानों का निर्माण किया। यह समझना कि विज्ञान की जो उन्नति हम आज देखते हैं, यह पहले कभी थी नहीं, या फिर कभी होगी नहीं, बिल्कुल ग़लत है। अभी कुछ वर्ष पूर्व भारत सरकार ने एक प्राचीन ग्रन्थ का अनुवाद स्वामी ब्रह्ममुनि जी से कराया। पुस्तक में बताया गया है पारे से वायुयान कैसे चलते थे। पहले भी यह विज्ञान था, आज से बहुत अधिक था; परन्तु हमारे ऋषियों ने देखा कि यह सारा विज्ञान केवल दु:ख की ओर ले जाता है; उस सुख को उत्पन्न नहीं करता जिसकी मनुष्य खोज में है; इसलिए उन्होंने ज्ञान के सुझाव को बदल दिया, प्रकृति के स्थान पर परमात्मा की ओर आ गये। अब भी यही होगा। विज्ञान ने अभी इतनी उन्नति नहीं की जितनी प्राचीन काल में की थी। अभी और उन्नति होगी, तब विनाश आयेगा। विज्ञान की दुनिया भी इस दिल्ली की भाँति है। बार–बार बनती है, बार–बार उजड़ती है। अब यह फिर बन रही है, दिल्ली भी बन रही है। एक–न–एक दिन उजड़ेगी अवश्य!

परन्तु मैं कह रहा था कि वेद में विज्ञान भी है। पूना में भाषण देते हुए महर्षि ने कहा था कि वेद के आधार पर मैं हवाई जहाज बना सकता हूँ, परन्तु एक अत्यन्त आवश्यक कार्य मेरे समक्ष है इसलिए वेद के मुख्य अर्थ को आपके सामने रखूँगा। और यह मुख्य अर्थ क्या है? यह कि इस शरीर में प्रभु का मिलन किस प्रकार हो? इस उद्देश्य को किस प्रकार पूरा किया जाय जिसके लिए यह शरीर मिला? आत्म–दर्शन कैसे हो?

बहुत देर की बात है। प्रजापति ने एक बार घोषणा की कि यह अजर, अमर, पाप से रहित आत्मा ही जानने और खोजने की वस्तु है। जो इसको जान लेता है वह सभी लोकों और सभी इच्छाओं को पूर्ण कर लेता है। इस घोषणा को देव लोगों ने सुना, असुर लोगों ने भी सुना। दोनों ने कहा– जिस आत्मा को जान लेने से सभी लोक प्राप्त होते हैं, सभी इच्छाएँ पूर्ण होती हैं, उसे जानना चाहिए अवश्य।

देव और असुर आकाश में नहीं रहते। किसी विशेष समय से भी उनका सम्बन्ध नहीं। जो लोग दूसरों को बचाने के लिए अपने प्राण तक देने के लिए तैयार रहते हैं वे देव हैं, और जो अपने–आप को बचाने के लिए दूसरों के प्राण तक ले लेते हैं वे असुर हैं।

हाँ, देव और असुर दोनों ने सोचा कि आत्मा को जानना चाहिए। देवताओं ने इन्द्र को अपना प्रतिनिधि बनाया, असुरों ने विरोचन को। दोनों को प्रजापति के पास भेजा कि ''जाओ, पूछकर आओ कि यह आत्मा क्या है?'' दोनों प्रजापति के पास पहुँचे। दोनों ने प्रणाम करके कहा, ''हम पूछने आये हैं कि आत्मा क्या है?'' प्रजापति ने मुस्कराते हुए कहा, ''पूछने आये हो तो मैं बताऊँगा, परन्तु पहले तुम्हें ब्रह्मचर्य धारण करके 32 वर्ष मेरे आश्रम में रहना होगा।'' दोनों ने ऐसा ही किया। 32 वर्ष व्यतीत हो गए। दोनों ने फिर पूछा, ''आत्मा क्या है?'' प्रजापति ने कहा, ''शीशा लाओ या कटोरे में पानी भर लाओ। उसमें देखो। क्या देखते हो उसमें?''

हाँ, देव और असुर दोनों ने सोचा कि आत्मा को जानना चाहिए। देवताओं ने इन्द्र को अपना प्रतिनिधि बनाया, असुरों ने विरोचन को। दोनों को प्रजापति के पास भेजा कि ''जाओ, पूछकर आओ कि यह आत्मा क्या है?'' दोनों प्रजापति के पास पहुँचे। दोनों ने प्रणाम करके कहा, ''हम पूछने आये हैं कि आत्मा क्या है?'' प्रजापति ने मुस्कराते हुए कहा, ''पूछने आये हो तो मैं बताऊँगा, परन्तु पहले तुम्हें ब्रह्मचर्य धारण करके 32 वर्ष मेरे आश्रम में रहना होगा।'' दोनों ने ऐसा ही किया। 32 वर्ष व्यतीत हो गए। दोनों ने फिर पूछा, ''आत्मा क्या है?'' प्रजापति ने कहा, ''शीशा लाओ या कटोरे में पानी भर लाओ। उसमें देखो। क्या देखते हो उसमें?''

दोनों ने पानी में देखा। अपने–अपने शरीर की छाया को पानी में देखा। दोनों प्रसन्न हुए। विरोचन ने समझा कि शरीर ही आत्मा है। असुरों के पास जाकर बोला, ''यह शरीर ही आत्मा है। इसे खिलाओ, पिलाओ, सजाओ, कपड़े पहनाओ। इसके लिए मकान बनाओ, मोटरें बनाओ, वायुयान बनाओ, इसी की पूजा करो। यही सब–कुछ है।'' परन्तु इन्द्र ने सोचा, प्रजापति तो आत्मा को अजर, अमर, अभय कहते हैं। यह शरीर तो बूढ़ा भी होता है, इसे डर भी लगता है, फिर यह आत्मा कैसे हो सकता है? वे फिर प्रजापति के पास गए; बोले, ''मेरी तसल्ली नहीं हुई। यह शरीर आत्मा नहीं हो सकता। कृपा करके बताइए कि आत्मा क्या है?'' प्रजापति ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा; बोले, ''विरोचन चला गया। उसकी असुर–बुद्धि है; वह वास्तविकता को कभी जानेगा नहीं। परन्तु यदि तुम आत्मा को जानना चाहते हो तो 32 वर्ष और मेरे आश्रम में ब्रह्मचर्य धारण करके रहना होगा।''

आजकल के किसी जिज्ञासु से ऐसी बात कहो तो वह शायद सोचे कि गुरु पागल हो गया है। 32 वर्ष पहले व्यतीत हो गए। 32 वर्ष और रखना चाहता है।

परन्तु इन्द्र ने फिर से आश्रम में रहना प्रारम्भ कर दिया। फिर 32 वर्ष बीत गए। प्रजापति ने पूरा रहस्य फिर भी नहीं बताया और 32 वर्ष रहने के लिए कहा। फिर चौथी बार 32 वर्ष रहने को कहा, तब जाकर बताया कि आत्मा क्या है। तब इन्द्र को पता लगा कि शरीर आत्मा नहीं है। जो शरीर की पूजा करता है, वह विनाश की पूजा करता है।

इन्द्र देवता था, विरोचन असुर। असुर लोगों ने शरीर की पूजा शुरू की, देव लोगों ने आत्मदर्शन किया। आज भी यह बात होती है। असुर लोग केवल शरीर की बात सोचते हैं। ये पाँच–साला प्लान, ये निर्माण–योजनाएँ, यह विज्ञान की उन्नति, सब उत्तम बातें हैं परन्तु ये हैं केवल शरीर की पूजा के लिए। उस आत्मा के साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं जो अजर, अमर और अभय है; जो कभी कष्ट नहीं होता और जिसके कारण यह सब–कुछ हो रहा है।

शेष अगले अंक में....

वार्षिक चुनाव

आर्य समाज नकुड (सहारनपुर)

प्रधान	श्री अभय सिंह सैनी एडवोकेट
उपप्रधान	पंकज कुमार सिघंल
मन्त्री	भूपेन्द्र कुमार आर्य
कोषाध्यक्ष	हरि दत्त आर्य
पुस्तकाध्यक्ष	उमेश कुमार आर्य
आय–व्यय निरीक्षक	प्रदीप कुमार

संध्या विधि

● यश वर्मा

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी, जो ज्ञान का भण्डार थे, जिनका बौद्धिक स्तर इतना ऊँचा था जिसका कोई सानी नहीं, जो हमारे पथ प्रदर्शक हैं व जिनकी भाषा की शैली को समझना कोई आसान कार्य नहीं, उन्होंने पञ्च महायज्ञ विधि में सर्वप्रथम ब्रह्म यज्ञ अर्थात् वैदिक सन्ध्या की विधि लिखी है। इस विधि को यदि हम ध्यान से पढ़ें और एक-एक शब्द की ओर ध्यान दें तो महर्षि द्वारा दिए गए अर्थों में जो रहस्य छिपे हुए हैं, वे धीरे-धीरे समझ में आने लगते हैं। हम लोग सन्ध्या प्रायः 7-8 मिनट में करके कहते हैं कि हो गई सन्ध्या। 30-40-50 वर्षों से प्रायः ऐसे ही करते आए हैं। यदि हम ठीक विधि से सन्ध्या करें तो 30-40-50 मिनट तो कम से कम लगेंगे और अभ्यास करते करते हमारे स्वास्थ्य में, शरीर में, व्यवहार में, वाणी में, मन और आत्मा में रूपातरण होना प्रारम्भ हो जाएगा।

जब हम संधिकाल में अर्थात् जब दिन और रात का मिलन होता है, प्रातः वेला और सायं काल में ईश्वर का ध्यान अर्थात् उस प्यारे प्रभु की स्तुति, प्रार्थना और उपासना बड़े ध्यान से दत्तचित्त होकर, ध्यान करते हैं। वह सन्ध्या है।

एकान्त स्थान पर आसन जमाकर बैठ जाएं और सज्जा करें। जब हमें किसी से मिलना होता है तो हम साफ-सुथरे प्रेस किए हुए कपड़े पहनकर सज संवर कर उससे मिलने जाते हैं। इसी प्रकार जब हमें अपने प्रिय प्रभु से मिलना है तो अवश्य ही सज्जा करनी चाहिए। शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा की शुद्धि करनी चाहिए। शरीर जल से, मन सत्य से, बुद्धि ज्ञान से और आत्मा विद्या व तप से शुद्ध होती है।

यदि आलस्य हो तो अपने शरीर का मार्जन करें यानि शरीर पर जल के छींटे मारें। यदि आलस्य न हो तो मार्जन की आवश्यकता नहीं है।

तत्पश्चात् तीन प्राणायाम करें। अन्दर की वायु को बल से बाहर करें, यथाशक्ति सांस को बाहर रोक दें, फिर सांस लेकर निकाल दें। इस प्रक्रिया को कम से कम तीन बार दोहराएं।

गायत्री मन्त्र का उच्चारण करते हुए अपने बालों को व्यवस्थित करते जाएं ताकि सन्ध्या करते समय अपने बालों अथवा शिखा के कारण व्यवधान न हो। लेकिन यदि गहराई में जाकर शिखा बन्धन के अभिप्राय को समझें तो जब हम गायत्री मन्त्र का उच्चारण अर्थ विचार के साथ करेंगे तो हमारा मन-चित्त-विचार-वृत्तियां आदि बन्ध जाएंगी, रुक जाएंगी।

आचमन मन्त्र, ओ३म शन्नो देवी .... इस मन्त्र के साथ 3 बार आचमन करें और ध्यान करें कि ईश्वर प्रकाशक, आनन्द देने वाला और सर्वव्यापक है। मनोवांछित और पूर्णानन्द और सुख देने वाला है। इस मन्त्र में सारा जीवन दर्शन भरा पड़ा है। मनोवांछित चाहते हो तो पढ़ाई करो, मेहनत करो, व्यवस्थित रहो तो देखो आप डाक्टर, इंजीनियर, आडीटर, आई.ए.एस., आई.पी.एस., उद्योगपति, व्यापारी, खिलाड़ी, नेता, अभिनेता, संगीतज्ञ, विद्वान, अधिकारी, अध्यापक अर्थात् जो भी आप चाहो बन सकते हो और सभी सुख साधन स्वास्थ्य, कोठी, कार, हवाई जहाज की सैर, परिवार, सन्तान अर्थात् सभी सांसारिक पदार्थ प्राप्त कर सकते हो। दूसरी ओर पूर्णानन्द की प्राप्ति भी कर सकते हो। जिसके साधन विवेक, वैराग्य, ब्रह्मचर्य, तप, स्वाध्याय, ईश्वर का निरन्तर ध्यान आदि हैं। प्रभु तो सुखों की वृष्टि करने वाले हैं। हम अपने जीवन का उद्देश्य समझें। प्रभु विश्वासी बनते हुए निर्भीक बनें। प्रतिकूलताओं में, सदैव व्यवहार में संतुलन बनाए रखें। अन्दर से स्थिर और शांत बने रहें।

फिर जल से इन्द्रिय स्पर्श मध्यमा व अनामिका से करना है। मध्यमा संतुलन की प्रतीक है व अनामिका तो है ही बिना नाम अर्थात् अहंकार रहित है। यह भाव मन में लाते हुए **ओ३म वाक् वाक्** .... इस मन्त्र में यही कामना की गई है कि मेरे शरीर के अंग, यश और बल देने वाले हों। यश और बल तो तभी मिलेगा जब हम पुरुषार्थ करेंगे, व्यायाम करेंगे, अपने ऊपर नियन्त्रण रखेंगे, अच्छा-शुद्ध-सात्विक खान पान रखेंगे, अच्छा चरित्र रखेंगे।

गायत्री मन्त्र का उच्चारण करते हुए अपने बालों को व्यवस्थित करते जाएं ताकि सन्ध्या करते समय अपने बालों अथवा शिखा के कारण व्यवधान न हो। लेकिन यदि गहराई में जाकर शिखा बन्धन के अभिप्राय को समझें तो जब हम गायत्री मन्त्र का उच्चारण अर्थ विचार के साथ करेंगे तो हमारा मन-चित्त-विचार-वृत्तियां आदि बन्ध जाएंगी, रुक जाएंगी।

मार्जन मंत्र अर्थात् पवित्रता का मन्त्र, **ओं भू पुनातु शिरसि** .... इस मन्त्र में रव ब्रह्म शब्द आया है, व्यापक होने से ब्रह्म नाम परमेश्वर का है। परमेश्वर से कामना की गई है कि मेरी बुद्धि और सारे अंग प्रत्यंग पवित्र हों।

यहां मन्त्र है, **ओं भू, ओं भुवः** .... इस मन्त्र के साथ, पहले अथवा बाद में उच्चारण करते हुए प्राणायाम करें। जैसे आप सुविधापूर्वक कर सकें। इस मन्त्र में सब काम परमेश्वर के हैं। अतः उसका ध्यान बनाए रखें।

अघमर्षण मन्त्र अर्थात् पापों को दूर करने के मन्त्र हैं। **ओं ऋतञ्च सत्यंचाभी** .... ईश्वर ने अपने पूर्ण ज्ञान विज्ञान से, पूर्व कल्प की भांति, जीवों के जैसे पुण्य पाप थे, सहजभाव से, त्रिगुणात्मक प्रकृति से, अपने ज्ञानमय सामर्थ्य से वेद ज्ञान, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, समुद्र, आकाशीय समुद्र, अन्तरिक्ष, लोक-लोकान्तर, रात, दिन, पल, क्षण अर्थात् इस सारी सृष्टि की रचना की। और सबमें व्यापक होकर अर्न्तयामी रूप में देखता है। इसमें विशेष बात यह आई कि वह (प्रभु) हमें हर समय देख रहा है। इसलिए हम उससे भय करके मन-वचन-कर्म से कोई पाप न करें। इसलिए ये पाप दूरी करण मन्त्र हैं। ऐसे भावों से इन मन्त्रों का उच्चारण करेंगे तो अच्छे कर्म करने की भावना बनेगी और हम पापों से दूर हट जाएंगे और जीवन पुण्यमय बन जाएगा। आगे भी प्रभु ऐसे सृष्टि रचना करेंगे।

इसके पश्चात् **ओं शन्नो देवी** .... मन्त्र के साथ पुनः आचमन करें। फिर गायत्री मन्त्र का कुछ देर जाप करें व यह भाव बनाएं कि जैसे प्रभु ने उपकार करके हमें व जगत को बनाया है वैसे हम भी उपकार करें। जैसे प्रभु सुख दे रहा है वैसे हम भी सबको सुख देवें जिससे हमारे समाज, राष्ट्र व मानवता की उत्थान हो। प्रभु दोनों प्रकार का सुख देते हैं। विषयों का सुख अर्थात् अच्छा सुनकर, देखकर, सूंघकर, स्पर्शकर, खाकर सुख लो। यदि विषयों का सुख नहीं लेना चाहते तो मोक्ष का आनन्द लो। योगी बनो, ऋषि-मुनि बनो, प्रभु का निरन्तर ध्यान करो और मोक्ष को पा लो। सगुण-निर्गुण उपासना करो। इसको साकार-निराकार मत समझ लो। प्रायः हम यही भूल कर जाते है। यहाँ प्राणायाम का भी प्रावधान है। गोताखोर के समान प्रभु के नाम में ऐसा गोता लगाओ कि आनन्दित हो जाओ और आत्मा शुद्ध-बुद्ध-पवित्र हो जाए।

अब आते हैं मनसापरिक्रमा के छः मन्त्र।

1. ओं प्राची दिगग्नि .... हे पूर्व दिशा के अधिपति अर्थात् राजा/रक्षक, आपको हमारा नमस्कार हो। आप अग्नि स्वरूप अर्थात ज्ञान स्वरूप हैं। इस मन्त्र में रक्षिता शब्द आया है। इसमें रक्षिता आदित्य अर्थात् सूर्य की किरण बाण के समान है। अर्थात् सूर्य और उसकी किरणें इस जगत के प्राण हैं। सूर्य प्राण देने वाला है। इसका अभिप्राय है कि जैसे सूर्य सबको प्राण देता है, हम भी औरों के प्राणों की यथासम्भव रक्षा करें, हिंसा न करें। आगे इस मन्त्र में कहा गया कि जो ईश्वर के गुण हैं और रचे पदार्थ हमारी रक्षा करने वाले हैं उनको नमस्कार हो। ईश्वर को नमस्कार तो ठीक है परन्तु पदार्थों को नमस्कार तो जड़ पूजा हो जाएगी, जो ऋषि ने वर्जित की है। अतः यहाँ बहुत बड़ा रहस्य छिपा है पदार्थों के नमस्कार में। यहाँ नमस्कार का भाव है कि प्रभु के बनाए पदार्थों का भली भांति प्रयोग आवश्यकतानुसार करें और उन पदार्थों की रक्षा भी करें। पृथ्वी, जल, वायु आदि को दूषित न करें। पहाड़ों, नदियों, वनों, पशु, पक्षियों से उपकार लेवें उनको नष्ट-भ्रष्ट व प्रदूषित न करें। जो अज्ञान से हमारा द्वेष करता है या हम किसी से द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाणरूप किरण मुखरूप में दग्ध कर देते हैं। यहाँ बुराई को दग्ध करने की बात कही गई है न कि व्यक्ति को। प्रभु का ज्ञान रूप गुण हमारे में आ जाए। जब ज्ञान होगा तो द्वेष भाव स्वयं दूर हो जाएगा। इसलिए हम वैर न करके सबके साथ मैत्री भाव रखें। आगे के पांचों मन्त्रों में द्वेषभाव न रखकर मैत्री भाव रखने की बात कही गई है।

2. ओं दक्षिणा दिगिन्द्रो .... दक्षिण दिशा के अधिपति इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्य वाले प्रभु को नमस्कार हो। आप कीट पतंगों आदि से, यहाँ से के अर्थ में रहस्य छिपा है, से यानी के द्वारा अर्थात् कीटपतंगों के द्वारा हमारी रक्षा करते हैं। ये नाना प्रकार के कीट पतंग, वायु व वातावरण के विष का सन्तुलन करने का कार्य करते हैं व नाना प्रकार के पदार्थ जैसे शहद आदि देते हैं, पराग लेकर दूसरे पौधों तक पहुँचाते हैं, अर्थात् यह कई कार्य करते हैं। इस प्रकार प्रभु इन कीट पतंगों के द्वारा हमारी नानाविध रक्षा करते हैं। इस मन्त्र में रक्षिता पितर इषवः को कहा गया है। पितर अर्थात् ज्ञानी लोग। अब ज्ञानी लोग कौन हैं? माता पिता, आचार्य, विद्वान, वृद्ध, संत-महात्मा, ऋषि-मुनि आदि। ये सब हमारी सांसारिक व अध्यात्मिक समस्याओं का समाधान करते हैं इसी प्रकार हम भी ज्ञानी बनें।

3. ओं प्रतीची दिग्वरुणो .... पश्चिम दिशा के अधिपति जो वरुण अर्थात् सबसे उत्तम है, उस परमेश्वर को हमारा नमस्कार हो। वो हमारी बड़े-बड़े सर्पादि विषधर प्राणियों से, अजगर से हमारी रक्षा करता है। क्या ये हमें काट रहे हैं या हानि पहुँचा रहे हैं, नहीं इनके द्वारा वातावरण का संतुलन बनाकर प्रभु हमारी रक्षा कर रहे

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका– जब ध्यान में बैठा जाये, तो क्या देखने का प्रयत्न किया जाये– अंधकार, प्रकाश, ओम, प्रतीक या कुछ और?

समाधान– तो देखिये! यह लम्बा–चौड़ा विषय है। और हर व्यक्ति का स्तर एक जैसा नहीं होता है। **अलग–अलग स्तर के व्यक्ति के लिये अलग–अलग प्रकार के अभ्यास हैं।** पहले–पहले आँख खोलकर के भी आप किसी वस्तु को देख सकते हैं। ऐसा पांच दिन, दस दिन, पन्द्रह दिन करें, बहुत दिन नहीं करें। दीवार पर एक ओम अक्षर लिख लीजिये और उस ओम को देखिये। स्थिर दृष्टि से दस–पांच दिन उसको देखिये। पाँच मिनट, दस मिनट रोज देखिये। तो देखते–देखते आपको दृष्टि स्थिर करने का अभ्यास हो जायेगा। उसके बाद फिर इस अभ्यास को बन्द कर देंगे। अगला अभ्यास करेंगे।

फिर आंख बंद करके मन के अंदर कोई प्रकाश, कोई सूर्य, कोई चन्द्रमा, कोई दीपक इस तरह की कोई प्रकाश वाली वस्तु को देखेंगे। आँख बंद करके पांच दिन, दस दिन, पन्द्रह दिन तक देखेंगे, इससे अधिक नहीं। नहीं तो फिर उसी अभ्यास में चिपक जायेंगे, उससे पीछा छुड़ाना मुश्किल जायेगा। यह प्रारंभिक अभ्यास है। पहले आंख खोलकर करें, फिर आख बंद करके करें। आँख बन्द करके कोई प्रकाश देंखे, कोई दीपक देंखे, कोई चन्द्रमा देखें, फिर धीरे–धीरे और अगला अभ्यास शुरू करें।

धीरे–धीरे सब प्रकाश को समाप्त कर दें। जैसे मान लीजिये– अमावस्या की रात है, तो उस दिन चन्द्रमा भी नहीं होता और रात को सूरज भी नहीं दिखता। और मान लीजिये कि– खूब गहरे बादल छाये हुये हैं, तो तारे भी नहीं दिखेंगे, उनका भी प्रकाश नहीं है। और यह जो सरकारी बिजली आती है, वो भी बंद। अब तो सब तरफ घुप्प अंधेरा हो जायेगा। फिर ऐसा देखें, सब तरफ से अंधकार ही अंधकार, कोई प्रकाश नहीं। मन में ऐसा देखेंगे, तो क्या होगा? आपको केवल यह आकाश दिखाई देगा, शून्य आकाश। इस **शून्य आकाश में अब ईश्वर का विचार करेंगे।** ईश्वर एक देशीय है, या सर्वव्यापक? सर्वव्यापक है। यह सिद्धांत की बात है। तो जब **ध्यान में बैठेंगे, तब सिद्धांत का क्रियात्मक रूप देखेंगे। उसको प्रेक्टिकल करेंगे, कि ईश्वर सर्वव्यापक है।** जैसे आकाश दूर तक फैला हुआ है और आकाश की कोई आकृति नहीं है अर्थात् आकाश निराकार है। जैसे आकाश दूर तक फैला हुआ है, निराकार है, ऐसे ही ईश्वर भी आकाश के समान दूर तक फैला हुआ है। और वो भी निराकार है। उसकी भी कोई आकृति नहीं है। तब ऐसे ईश्वर का ध्यान करेंगे, तो आपको सफलता मिलेगी।

शंका– मोक्ष में जीवात्मा आनंद का अनुभव कैसे करता है? क्या वह समझता है, कि आनंद प्राप्त कर रहा है?

समाधान– हाँ, बिल्कुल, मोक्ष में उसको पूरा अच्छी तरह अनुभव होता है, कि मैं आनंद प्राप्त कर रहा हूँ। जैसे– आपके सामने प्लेट में रसगुल्ले रखे हैं, और आप जाग रहे हैं, अच्छी तरह होश में हैं। आप जब रसगुल्ले खा रहे हैं, तो आपको पता चलता है, कि रसगुल्ले का स्वाद ले रहे हैं। जैसे आप जागृत अवस्था में रसगुल्ले, मिठाई खाते हैं, उसका स्वाद मिलता है, सुख मिलता है। और आप समझ रहे हैं कि हम रसगुल्ले का स्वाद ले रहे हैं, उसका सुख भोग रहे हैं। ऐसे ही मोक्ष में जीवात्मा को पूरा–पूरा होश रहता है। **उसे पूरा–पूरा पता चलता है, कि हम ईश्वर का आनंद ले रहे हैं।** ईश्वर का आनंद उसको मिलता रहता है। और वो ठीक ऐसे ही समझता है, जैसे हम जागृत अवस्था में यहाँ संसार में समझते हैं, कि हम सुख भोग रहे हैं। यह मोक्ष में जीवात्मा द्वारा आनंद भोगने की स्थिति है।

शंका– किसी ने चोरी की और भगवान ने नहीं देखा। क्या यह हो सकता है?

समाधान– ऐसा नहीं हो सकता, कि किसी ने चोरी की और भगवान ने उसे देखा नहीं। **भगवान सब जगह रहता है और सबको देखता है।** जो भी चोरी करता है, भगवान उसे देखता है। फिर उसके कर्मों के खाते में जमा कर देता है। और समय आने पर उसको दण्ड भी देता है।

शंका– 'सर्वान्तर्यामी' का अर्थ क्या है?

समाधान– 'सर्व' यानी सभी में, 'अन्तर्यामी' अर्थात् अन्दर रहकर नियंत्रण करने वाला। जो सबके अन्दर रहता है, मन की सारी बातें जानता है और नियंत्रण करता है, यह सभी बातें सर्वान्तर्यामी से जुड़ी हुई हैं। 'ईश्वर' सर्वान्तर्यामी है। जब व्यक्ति बुरी योजना बनाता है, तो ईश्वर अन्दर से भय, लज्जा व शंका उत्पन्न करता है और वह बुरा काम करने से रोकता है। यही ईश्वर का नियंत्रण है। इसके विपरीत, जब व्यक्ति अच्छी योजना बनाता है, तो ईश्वर आनंद व उत्साह देता है, प्रोत्साहित करता है। सर्वान्तर्यामी ईश्वर हाथ पकड़कर किसी काम से नहीं रोकता, बल्कि मानसिक रूप से ही बुरा काम करने की मनाही करता है और सही काम के लिए प्रेरित करता है। यही उसका 'सर्वान्तर्यामी' रूप है।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़, जिला साबरकांठा,
गुजरात

☞ *पृष्ठ 04 का शेष*

संध्या विधि

। ये वातावरण के विष को अपने अन्दर ।ख लेते हैं। इस मन्त्र में रक्षिता जो है वह न्नमिषवः को बताया गया है। अन्नमिषवः थ्वी के लिए आता है। अब पृथ्वी के गुण खिए, सहनशीलता, क्षमा, धैर्य, देने की मता। हम भी पृथ्वी के गुण धारण कर लें ।र द्वेष न करें किसी से।

4. ओं उदीची .... उत्तर शा के अधिपति जो सोम अर्थात शांति, ।नन्द, उत्साह, प्रेरणा आदि देने वाला ।वर है उसको हमारा नमस्कार हो। यहां क्षेता शनि अर्थात विद्युत है। विद्युत कितने प्रकार से हमारी रक्षा कर रही है। प्रकाश रूर, शक्ति रूप में। आजकल तो लगभग भी सुख व आवश्यकताओं की पूर्ति के धनों में किसी न किसी रूप में विद्युत/ न्नोलोजी कार्य कर रही है। इसी प्रकार भी विद्युत के समान इस संसार को ख देने का साधन बन जाएं। और किसी द्वेष न करें।

5. ओं ध्रुवा ....
नीचे की दिशा के अधिपति जो विष्णु हैं, अर्थात् व्यापक हैं, उन्हें व्यापक जानकर हम नमस्कार करते हुए ध्यान करते हैं। यहां रक्षिता हरे रंग की गर्दन वाले वृक्ष आदि हैं। ये हमें फल–फूल, जीवनदायिनी वायु देते हैं, इनमें स्थिरता, नम्रता, नीचे से ऊपर उठने के गुण हैं। इसी प्रकार हम भी अपने में ऐसे गुण धारण करें व किसी से द्वेष न करें।

6. ओं ऊर्ध्वा ....
ऊपर की दिशा के अधिपति जो बृहद आकाश और वेदवाणी के स्वामी परमेश्वर को अपना रक्षक जानकर ध्यान करते हुए हम नमस्कार करते हैं वह शुद्धस्वरूप है। इस मन्त्र में रक्षिता वर्ष मिषवः अर्थात् वर्षा के बिन्दु हैं। जो हमें शीतलता, शान्ति, निर्मलता, पवित्रता, प्रसन्नता, विशालता आदि देते हैं। हम भी वे गुण धारण करें और किसी से द्वेष न करें।

अब आते हैं 4 उपस्थान मन्त्र। इनमें प्रथम तीन मन्त्र **ओं उदवयं............., ओं उदुत्यं............., ओं चित्रम............ में** प्रभु का स्वरूप अर्थात वह ज्ञानस्वरूप, सदा विद्यमान, सबकी आत्मा, रक्षक, वेदों के रचयिता, सूर्य के प्रकाशक, प्राणी और जड़ जगत की आत्मा अर्थात रक्षा करने वाले, धारण करने वाले, मित्र, अग्नि के प्रकाशक, दुख विनाशक आदि का वर्णन है। ऐसी भावना रखते हुए प्रभु का ध्यान करें। चौथे मन्त्र यानि ओं तच्चक्षुर्देवहितं........... का प्रायः यही अर्थ समझते हैं कि हम सौ वर्ष तक देखें, सुनें, स्वस्थ रहें आदि। जबकि वास्तव में इस मन्त्र में प्रभु से प्रार्थना की गई है कि हम उसी ब्रह्म को सौ वर्ष पर्यन्त देखें, जीवें, सुनें। उसी ब्रह्म का उपदेश करें अर्थात् ब्रह्म की चर्चा करें, और किसी के आधीन न रहें। हमारा देखना, सुनना, बोलना अर्थात् सभी कार्य ब्रह्ममय हों। केवल सौ वर्ष जीना उद्देश्य नहीं है बल्कि ब्रह्म के साथ जीना उद्देश्य है। इसलिए प्रेम में अत्यन्त मग्न होके अपने मन व आत्मा को प्रभु से जोड़कर इन मन्त्रों से स्तुति, प्रार्थना, उपासना करनी चाहिए। इसीलिए इन मन्त्रों को उपस्थान अर्थात् परमात्मा के समीप बैठने के मन्त्र का नाम दिया गया है।

इसके पश्चात गायत्री मन्त्र का उच्चारण अर्थ विचार सहित करें और फिर ईश्वर को समर्पण कर दें कि हमने जो जो उत्तम कार्य किए हैं वे सब आपको समर्पित हैं। आप हमें धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष इन सब की सिद्धि/ प्राप्ति करवाइए। फिर ईश्वर के भिन्न–भिन्न स्वरूपों को अर्थात् सुख स्वरूप, कल्याण स्वरूप, मोक्ष स्वरूप, मंगल स्वरूप का भाव लाते हुए बारम्बार नमस्कार करते जाएं। इस प्रकार जब हम अन्तःकरण शुद्ध करके, प्रभु के नाम को, उसके गुणों को अपने भावों में भर लेंगे और अपने पापों व बुरे विचारों का अघमर्षण कर देंगे और प्रभु व प्रभु के बनाए पदार्थों के गुणों को अपने जीवन में धारण कर संसार के प्रति उपकार भावना रखते हुए, पुरुषार्थ करेंगे तो हमें अवश्य ही सांसारिक सुख व पूर्णानन्द की प्राप्ति की सम्भावना प्रबल होती जाएगी।

ओं शांति शांति शांति।

86–ई, प्रोफेसर कालोनी
यमुनानगर

राष्ट्रचेता डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम को वेद–वीराञ्जलि

"भारत को फिर से धनुर्धर बना गये डॉ. कलाम"

● देवनारायण भारद्वाज

प्रतिवर्ष विजय दशहरा पर्व पर रामलीला का प्रदर्शन करके अन्याय पर न्याय की जीत का शंखनाद किया जाता है। इस अवसर पर जो मेले लगते हैं, उनमें तीर कमान व तलवार खिलौने के रूप में विक्रय किये जाते हैं, जिससे बच्चों को इनके नाम एवं काम का पता रहता है। धनुर्धर होने का आशय है – सतर्क व सावधान होकर अपने अधिकार की रक्षा करना और शासक के लिए इसका संदेश होता है– अपनी शासन व्यवस्था को जन कल्याणकारी बनाने के साथ–साथ राष्ट्र रक्षा के लिए सन्नद्ध रहना। वेदमाता इसी प्रकार की सीख हमको प्रदान करती है :–

धनुर्हस्तादाददानो मृतस्य सह क्षत्रेण वर्चसा बलेन।
समागृभाय वसु भूरि पुष्टमर्वाङ्त्वमेह्युप जीव लोकम्।।

(18.2.60 अथर्व.)

अर्थात् मृतवत् का पुरुषों के हाथ से शासन सत्ता के प्रतीक धनुष को राज्य के क्षत्रिय तेज व बल से छीनकर पुरुषार्थी जीवन्त लोगों के हाथों में सौंप देते हैं जिससे वे सम्यक् रूप से पुष्टि कारक बहुत सारे ऐश्वर्य व यश के अधिकारी बनते हैं। महाभारत कालीन महान योद्धा अर्जुन ने लड़ने वाले सगे सम्बन्धियों को देखकर अपना गाण्डीव स्वयं छोड़ दिया। योगिराज कृष्ण धन्य ही उसके सारथी थे, जो उन्होंने अपने गीतोपदेश द्वारा अर्जुन को युद्ध के लिए उद्यत कर दिया। ग्रामीण भाषा में धनुष को कमान कहते हैं, जो कमाण्ड या नियन्त्रण का बोध कराती है। कमान की प्रत्यन्चा (डोरी) यदि तनी रहती है, तभी उससे तीर भी चलता है और एकतारा की टंकार का संगीत भी निकलता है। तात्पर्य यह है कि शासन की सन्नद्धता में ही राष्ट्र की सुरक्षा और विकास की समृद्धता संभव है। देखिये :–

धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम।।

(ऋग्वेद 6.75.2)

अर्थात् धनुष के द्वारा शत्रुओं द्वारा हरण की गयी गौओं तथा भूमि को फिर से जीतने वाले बनें। धनुष से हम संग्रामों को जीतें। इस धनुष से ही बड़े तीक्ष्ण स्वभाव वाले मदान्ध शत्रु सैन्यों को जीतें। यह हमारा धनुष ही शत्रुओं की विजय की अभिलाषा को चूर्ण करता है। धनुष ही सभी दिशा–दिशान्तर में हमें दिग्विजयी बनाता है। रामायण एवं महाभारत काल के काव्यों का जब हम अवलोकन करते हैं तो महर्षि विश्वामित्र एवं महर्षि परशुराम प्रभृति युद्ध कौशल एवं शस्त्रास्त्र विद्या में निपुण देखे जाते हैं और वे अपने शिष्यों को इसके लिए प्रशिक्षित भी करते हैं।

डॉ. होमी जहाँगीर भाभा तथा डॉ. विक्रम साराभाई यद्यपि अल्पायु में ही अनहोनी मृत्यु को प्राप्त हो गये, किन्तु उन्होंने जो योगदान भारत की सुरक्षा में प्रदान किया, वह अमूल्य ही नहीं, प्रत्युत डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की प्रेरणा का स्रोत भी बना। हम "हिन्दी–चीनी भाई–भाई" का नारा लगाकर चीनी नेताओं का स्वागत करते रहे, किन्तु उन्होंने इसकी उपेक्षा कर नवोदित स्वतन्त्र भारत के ऊपर सन् 1962 में भयंकर आक्रमण कर दिया। उन दिनों दूरदर्शन इतना प्रचलित नहीं था, किन्तु आकाशवाणी पर सेवानिवृत्त लोकप्रिय प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने रुग्णावस्था में सदाकत आश्रम (बिहार) से जो वेदना पूर्ण वर्जना की थी, और भारत के लोकप्रिय प्रथम प्रधानमंत्री ने जो हृदयाघातकारी गर्जना की थी, वह लेखक के कानों में आज भी गूँज रही है। ये दोनों ही महापुरुष कुछ ही काल बाद हमसे विदा हो गये, किन्तु भारतीयों के नेत्रों में पश्चाताप, प्रतिज्ञा का महान संकल्प संजो गये जिससे भारत सतर्क सावधान होकर खड़ा हुआ, और सन् 1965 में अपने दूसरे नापाक आक्रमणकारी पड़ोसी को धूल चटा दी। मर्यादा पुरुषोत्तम राम एवं योगिराज कृष्ण का आदर्श–अनुगमन करते हुए गिड़गिड़ाते शत्रु को, गरल का घूँट पीकर भी ताशकन्द के समझौते में जीती हुई भूमि लौटा दी। इस षड्यंत्र में अपने लाडले पुत्र भारत के द्वितीय प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री का असामयिक बलिदान भी भारत माता को झेलना पड़ा।

इन सभी सम–विषम परिस्थितियों में अवतरण होता है वीर सेनानियों का, धीर राष्ट्र नेताओं का और गम्भीर वैज्ञानिक डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम एवं उनके सहकर्मियों का, जो भारत राष्ट्र के हाथ में सबल संहारक धनुष फिर पकड़ा देते हैं। उन्हें अपने प्राचीन योद्धाओं एवं अस्त्र–शस्त्र के संदर्श से जो प्रेरणा मिलती है, उसी के आधार पर प्रारम्भ होते हैं। उपग्रह प्रेषण, अन्तरिक्ष यान, प्रक्षेपणास्त्र (मिसाइल) त्रिशूल, लक्ष्य, पृथ्वी, नाग और आकाश आदि और पोखरण में परमाणु परीक्षण के विस्फोट। क्या आपको पता है कि अपने सुख दुःख, संकट के समय हिन्दी न जानने पर भी राष्ट्रभाषा के एक गीत की पंक्तियाँ गुनगुनाकर डॉ. कलाम स्वयं को सुसंयत बना लिया करते थेः–

होंगे कामयाब,
हम होंगे कामयाब,
हम होंगे कामयाब एक दिन।
हो–हो–हो पूरा है विश्वास, मन में है विश्वास,
हम होंगे कामयाब एक दिन।

आई.पी.एस. पद त्याग कर सत्यार्थ प्रकाश के अनुरागी तमिलोदभव महात्मा धर्मबन्धु से डॉ. कलाम के प्रगाढ़ मैत्री सम्बन्ध रहे हैं। सम्भवतया इसलिए डॉ. कलाम **"मातृमान्, पितृमान्, आचार्यमान् पुरुषो वेद"** की शिक्षा सम्पूर्ण भारत में घूम–घूम देते रहे हैं। राष्ट्रपति बनने से पहले ही डॉ. कलाम भारत रत्न हो गये थे। पदग्रहण करते ही डॉ. कलाम ने गरिमामय घोषणा की थी "भारत के युवा नागरिक होने के नाते, प्रौद्योगिकी, ज्ञान और देश प्रेम से युक्त मैं महसूस करता हूँ कि छोटा लक्ष्य अपराध है। **"प्रक्षेपणास्त्र पुरुष, दार्शनिक तथा राष्ट्रपति होते हुए भी वे सदैव एक शिक्षक की भूमिका–निर्वहन करते रहे।** यहाँ पर उनके सम्पूर्ण जीवन वृतान्त का वर्णन संभव नहीं। इसके लिए तो आपको उनके आत्मकथ्य 'अग्नि की उड़ान', व 'तेजस्वी मन' आदि ग्रन्थों का वाचन करना पड़ेगा। प्रक्षेपणास्त्र पुरुष, दार्शनिक तथा राष्ट्रपति होते हुए भी वे सदैव शिक्षक की भूमिका निर्वहन करते रहे। भारत के सुदूर दक्षिण के रामेश्वरम–धनुषकोटि के सिन्धु जलक ों से उपजा यह पुनीत पंकज सुदूर उत्त के मेघालय स्थित श्वेत शिलांग के हजार फीट ऊंचे रजकणों का संस्पर्श करते हुए सू के साथ ही अस्ताचल में विलीन हो गया प्रौद्योगिक शिक्षण संस्थान के महामन्दिर मे माता के मस्तक को ऊँचा करने सपूत क यह महाबलिदान है। शिलांग की शिलायें भी अश्रु विगलित करते हुए मानो गुंजन कर रही हों :–

जो भरा नहीं है भावों से बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है पत्थर है जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।।

जहाँ योगेश्वर कृष्ण के अनुकरणकारी राष्ट्रनायक, जहाँ अर्जुन जैसे धनुर्धारी अनुयायी योद्धा हों, वहाँ श्री, विजय, विभूति एवं अचलनीति सदा विराजते हैं एक हाथ में धनुष (प्रक्षेपणास्त्र) दूसरे में रुद्रवीणा धारी, संस्कृतज्ञ कलाम के मुख से प्रस्फुटित एक श्लोकीय गीत की यही तो घोषणा है :–

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्री र्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिमम।।

'वरेण्यम', अवन्तिका (प्रथम),
रामघाट मार्ग, अलीगढ़ (उ.प्र.)

वैदिक प्रार्थना

पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा।। यजु. 19.39

I need cleansing and purification
of thoughts and actions
I have many failings and weaknesses
May the Enlightened One help me
cleanse and purify
my body and soul,
my mind and intellect,
my words and actions.
O Lord, make me pious and pure.

दोष मुझमें ढेर होंगे;
देवजन, ज्ञानी तपस्वी झाड़ पोंछ पवित्र कर दें
मुझे; मेरी बुद्धि, मेरा मन तथा सब कर्म मेरे
शुद्ध और पवित्र होवें।
अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी,
वायु, जिनसे यह बना है देह मेरा, करें निर्मल !
और प्रभु सर्वज्ञ तुम भी कलुष सब मेरे हटा कर
मुझे पूर्ण पवित्र कर दो!

स्व+अभिमान=स्वाभिमान

● कृष्ण मोहन गोयल

दो शब्द हैं, एक है अभिमान तथा दूसरा है स्वाभिमान। दोनों का स्वरूप लगभग एक–सा है। अभिमान में 'स्व' प्रत्यय जोड़ देने से स्वाभिमान बन जाता है परन्तु अर्थों में भिन्नता है। यदि सही अर्थों में कहा जाये तो भिन्नता ही नहीं बल्कि विरोध भी है। अभिमान में अपने को दूसरे से श्रेष्ठ समझने का भाव बोध होता है जबकि स्वाभिमान में अपने पर गर्व करने का भाव बोध होता है। अभिमान में एक प्रकार के अकड़ होती है जबकि स्वाभिमान में सौम्यता होती है, विनम्रता होती है।

चरक संहिता के अनुसार अभिमान की एक मानसिक रोग की श्रेणी में गणना की गयी है तथा स्वाभिमान को एक स्वस्थ मस्तिष्क का परिचायक माना गया है। विचारणीय है कि इस संसार में एक से एक श्रेष्ठ, सुन्दर, धनवान, योग्य, प्रतिभाशाली, स्वस्थ तथा मेधावी है। फिर हर किसी का एक क्षेत्र होता है। हर कोई अपने श्रेत्र में सुन्दर,धनवान, योग्य, प्रवीण, प्रतिभाशाली, मेधावी है। हम समाज के किस–किस से तुलना करेंगे? अभिमानी व्यक्ति आजीवन दुखी ही रहता है और दुःख ही भोगता रहता है। इसलिए कभी भी दूसरे से अपने को श्रेष्ठ नहीं समझना चाहिए। हां, अपने को इतना योग्य बनाओ कि समाज को तुम्हारे ऊपर गर्व हो। इसलिए अभिमानी न बन कर स्वाभिमानी बनो। विश्वविजेता सिकन्दर महान् एक अभिमानी राजा होने के कारण आज भी तिरस्कृत है।

अभिमान एक ऐसा शब्द है जिसको समाज गलत मानता है और उसे यह शब्द स्वीकार्य नहीं है। इसी कारण अभिमान शब्द में 'स्व' जोड़ा गया है। अभिमान का अर्थ होता है 'अहंकारी अर्थात् जिसको अपने ऊपर गर्व नहीं, अहंकार है। स्वाभिमानी व्यक्ति वही होता है जो स्वयं को भली भांति पहचानता हो। स्वाभिमानी व्यक्ति में न तो स्व की भावना होती है और न ही अभिमान की। ऐसे व्यक्ति से समाज का प्रत्येक व्यक्ति जुड़ना चाहता है। जबकि अभिमानी व्यक्ति से समाज घृणा करता है और दूर ही रहना चाहता है क्योंकि वह अहंकार से युक्त होता है और समाज में ऐसे व्यक्ति को सदैव हीन भावना से देखा जाता है। समाज में उसके प्रति न तो किसी प्रकार का आदर होता है और न ही सम्मान होता है।

स्वाभिमानी व्यक्ति की तो बात ही कुछ और होती है। वह प्रत्येक पग पर विनम्र होता है स्वाभिमानी हमेशा 'सर्वजन सुखाय, सर्वजन हिताय' को ही चरितार्थ करता है और 'योगक्षेम' का अनुपालन करने के लिए सदैव तत्पर रहता है। जबकि अभिमानी व्यक्ति सदैव अहंकार, द्वेष, ईर्ष्या, क्रोध से ग्रसित रहता है। हमारा दूसरे से श्रेष्ठ होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता है। हर कोई अपने स्थान पर श्रेष्ठ होता है, अनूदित होता है। इस संसार मे कोई किसी से ऊपर नहीं है और न किसी से नीचे है। एक छोटी से घास में उगा हुआ फूल भी अपना उतना ही महत्व रखता है जितना कि आकाश में स्थित बड़े से बड़ा तारा अपना महत्व रखता है। दोनों का अपने–अपने स्थान पर समान ही मूल्य है। रहीम कवि ने कहा भी है–

रहिमन देख बडेन को लघु न दीजिये डार।
जहां काम आवे सुई कहा करे तलवार।।

अर्थात् जो कार्य एक छोटी सी सुई कर सकती है वह कार्य तलवार द्वारा नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार जो कार्य तलवार द्वारा किया जा सकता है उस कार्य को सुई द्वारा नहीं किया जा सकता है। सबका अपना–अपना स्थान है, अपना–अपना महत्व है।

कबीर, सूरदास, तुलसीदास, मीराबाई, रसखान, मुंशी प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, पं. रामचन्द्र शुक्ल, रामधारी सिंह 'दिनकर, हजारी प्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा जैसे लेखकों, महात्मा गौतम बुद्ध, महर्षि स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज जैसे सन्तों और महापुरुषों, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरु गोविन्द सिंह जैसे शौर्यवान पुरुषों, महात्मा गांधी, सुभाष चन्द्र बोस, स्टालिन, मुसोलिनी, चर्चिल जैसे महानुभावों को स्वाभिमानी व्यक्तियों की श्रेणी में गिना जाता है और समाज उनको आज भी सम्मान और आदर की दृष्टि से देखता है जबकि रावण, दुर्योधन, हिटलर जैसे व्यक्तियों की गणना संसार में आज भी अभिमानी व्यक्तियों में की जाती है।

क्या आपने कभी अपने विषय में भी परिकल्पना की है, मनन किया है कि आप स्वयं किस श्रेणी में आते हैं? यदि स्वाभिमानी हैं तो एक श्रेष्ठ व्यक्ति हैं और अभिमानी तो शीघ्र ही अपने में परिवर्तन लाइये और स्वाभिमानी बनिये। विश्व आपका सम्मान करेगा, स्वागत करेगा।

113–बाजार कोट,
अमरोहा–244221

गृहस्थाश्रम को स्वर्ग का साधन समझें

● कन्हैयालाल आर्य

गृहस्थ और सुख? यह तो कुछ अनोखी बात है। इसमें इतने दुःख हैं कि आरम्भ से ही इसे दुःखों का घर समझा जाता है। आधुनिक काल में जब कि हमने अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं को बहुत बढ़ा रखा है तो कुछ बात यथार्थ प्रतीत होने लगती है, परन्तु यदि गम्भीरता पूर्वक इस पर विचार किया जाये तो महर्षि मनु की यह बात सही है कि गृहस्थ आश्रम व्यवस्था की दृष्टि से ज्येष्ठ तथा श्रेष्ठ सिद्ध है।

गृहस्थाश्रम तो लोक और परलोक दोनों को सुधारने का एक माध्यम है। इस माध्यम को मानव ने अपने स्वार्थ, आलस्य, प्रमाद, अतिवासना तथा लोभ और मूर्खता से बिगाड़ रखा है। हम स्वयं ही जंजीरें घड़ते हैं और अपने हाथ–पांव में बांध लेते हैं और फिर चिल्लाने लगते हैं कि हम बाधे गये। गृहस्थाश्रम का तो इसलिए निर्माण किया गया ताकि लम्बी जीवन यात्रा में नर या नारी अकेला थक न जाये। लम्बी यात्रा में साथी साथ हो तो यात्रा सरल बन जाती है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार इन पांचों को ठीक मर्यादा में रखने का सुन्दर साधन गृहस्थ है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जैसे आजीवन ब्रह्मचारी विरले ही होते हैं, उन्होंने भी गृहस्थाश्रम को सर्वश्रेष्ठ कहा है। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में बताया है कि :

1. **यथा नदी नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।**
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्।।

जैसे नदी और बड़े–बड़े नद तब तक भ्रमते ही रहते हैं जब तक समुद्र को प्राप्त नहीं हो जाते, वैसे ही गृहस्थ के आश्रम में सब आश्रम स्थिर रहते हैं। बिना इस आश्रम के किसी आश्रम का कोई व्यवहार सिद्ध नहीं होता।

2. **यथा वायुं समाश्रित्य, वर्तन्ते सर्वजन्तवः।**
तथा गृहस्थामाश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमाः।।

जैसे वायु के आश्रय पर सब प्राणी हैं वैसे गृहस्थाश्रम सब आश्रमों का आश्रय दाता हैं।

3. **यस्मात्त्रयोप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम्।**
गृहस्थेनैव धार्य्यन्ते तस्मात ज्येष्ठाश्रमो गृही।।

जिससे ब्रह्मचारी वानप्रस्थ और सन्यासी तीन आश्रमों को दान और अन्नादि देकर गृहस्थ ही धारण करता है इसीलिए गृहस्थ ज्येष्ठाश्रम है अर्थात् सब व्यवहारों में धुरन्धर रहता है।

4. **स संधार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।**
सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः।।

जो अक्षय मोक्ष और संसार के सुख की इच्छा करता हो, वह प्रयत्न से गृहाश्रम धारण करे। जो गृहाश्रम दुर्बल इन्द्रिय, भीरु और निर्बल पुरुषों के धारण योग्य नहीं है, उसको अच्छे प्रकार धारण करें।

इसलिए जितना कुछ व्यवहार संसार में है उस का आधार गृहाश्रम है। जो यह गृहस्थाश्रम न होता तो सन्तानोत्पत्ति के न होने से ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम कहां से हो सकते? जो कोई गृहस्थ आश्रम की निन्दा करता है, वही निन्दनीय है, जो प्रशंसा करता है वह प्रशंसनीय है। परन्तु तभी गृहस्थाश्रम में सुख होता है, जब स्त्री और पुरुष दोनों परस्पर प्रसन्न, विद्वान्, पुरुषार्थी और सब प्रकार के व्यवहारों के ज्ञाता हों।

प्राचीन इतिहास बतलाता है कि ऋषि मुनि गृहस्थाश्रम में रहकर सब का पथप्रदर्शन करते थे और हमारे पूर्वज नारी जाति का अत्यधिक मान करते थे, तभी तो कहा है :

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।

जहाँ नारियों का सम्मान होता है वहाँ देवता निवास करते हैं। महर्षि मनु ने तो यहाँ तक कह दिया है कि नारी ही घर की शोभा है, जहाँ गृहिणी नहीं वह घर ही नहीं। जहां पति और पत्नी का एक दूसरे से प्यार है, वही घर स्वर्ग समान है। जहाँ पुत्र–पुत्रियाँ आज्ञाकारी हों, वही घर स्वर्ग समान है। स्वर्ग किसी ऊपर या नीचे के लोकों का नाम नहीं है, यदि इसी गृहस्थ में आप सुखी हैं तो आप इस जीवन काल में भी 'स्वर्गीय' अर्थात् सुखी बन सकते हैं। स्वर्गीय का अर्थ है स्वर्ग में रहना, जहाँ प्रत्येक प्रकार का सुख, समृद्धि, सन्तोष हो उसी का नाम स्वर्ग है और ऐसे स्वर्ग की प्राप्ति गृहस्थाश्रम के माध्यम से ही प्राप्त की जा सकती है। इसलिए यह धारणा कि गृहस्थी सुखी नहीं हो सकता और गृहस्थ तो दुःखों का घर है, यह गलत है। गृहस्थ ही एक ऐसा आश्रम है जिसके माध्यम से धर्म, अर्थ, काम और अन्ततः मोक्ष की प्राप्ति सभव है।

विवाह के समय वर वधू का सात कदम एक साथ चलना भी इसी भाव का प्रतीक है। जहां अन्न, शारीरिक बल, धन, सुख, सन्तान प्राप्ति, चारों तरफ की प्राकृतिक परिस्थिति का अनुकूल होना कहा है, वहां सातवां कदम रखते हुए वर कहता है :

ओ३म् सखे सप्तपदी भव विष्णुस्त्वा नयतु,
पुत्रान् विन्दावहे, बहूंस्ते सन्तु जरदष्टयः।

अर्थात् हम सदा साथ रहें, हममें मैत्री भाव रहे, तेरा मन मेरे मन के अनुकूल हो, हम दोनों मिलकर पुत्र–पुत्रियों को प्राप्त

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

हे राजन्! प्रजा में विश्वास पैदा कर

● डॉ. अशोक आर्य

राज सत्ता पाने के पश्चात् आमोद-प्रमोद में ही न उलझ जावे, राग-द्वेष में ही न व्यस्त हो जावे, केवल विलासिता ही उसका कार्य न रह जावे किन्तु प्रजा की देख रेख करना, उसकी सुख सुविधाओं का ध्यान करना तथा उसके विकास के कार्य करना भी राजा का मुख्य कार्य होना चाहिए। अन्यथा प्रजा दुःखों से ग्रस्त हो जावेगी, उसमें विद्रोह की भावना उदय होगी और इस प्रकार के राजा का अंत चाहेगी तथा अवसर मिलते ही उसे पदच्युत कर देगी। इस तथ्य का प्रकाश भी इस मन्त्र से होता है।

इन्द्रेन्द्र मनुश्याऽः परेहि सं ह्यज्ञास्था वरुणैः संविदानः।

स त्वायमह्वत्स्वे सधस्थे स देवान्यक्षत्स उ कल्पयाद्विशः।। अथर्ववेद 3.4.6।।

मन्त्र ऊँचे स्वर में उपदेश करते हुए कह रहा है कि हे राजन्! प्रजा ने तुझे अपना राजा चुनकर तुझे अपनी सत्ता तो सौंप दी है किन्तु इस सत्ता को स्थिर रखने के लिए, इस सत्ता को स्थायी बनाने के लिए तुझे पुरुषार्थ करना होगा, जनहित के कार्य करने होंगे, प्रजा के हित के कार्य करने होंगे, अन्यथा जिस प्रकार बड़े प्रेम से यह सत्ता प्रजा ने तुझे दी है, उस प्रकार ही क्रोध से यह प्रजा तेरे नीचे से यह सिंहासन छीन भी सकती है।

मन्त्र कह रहा है कि हे राजाओं के महाराजा! अर्थात् राजन्! आप केवल राजा ही नहीं हो अपितु राजाओं के भी महाराज हो। इस का भाव यह है कि आप अब चक्रवर्ती राजा बन गए हो। देश के जितने भी राजा हैं सब तेरी छत्रछाया के नीचे ही अपना राज्य चला रहे हैं। सब तेरे आशीर्वाद से ही अपने-अपने राज्य की व्यवस्था कर रहे हैं। तेरा राज्य स्थिर रह सके, इसके लिए चाहे आपने एक बड़ा ही सुसंगठित गुप्तचर विभाग बना रखा है, ये गुप्तचर तेरे पूरे राज्य में फैले हुए हैं, पूरे देश में कहीं भी कोई अच्छी या बुरी घटना घटती है, उसकी सूचना तत्काल तेरे तक पहुँच जाती है तो भी तुझे स्वयं अपने राज्य की व्यवस्था देखने के लिए दूर-दूर तक, अपने राज्य के प्रत्येक कोने तक जाकर सब व्यवस्था का स्वयं निरीक्षण करना चाहिए।

हे राजन्! अपने राज्य के निरीक्षण की दो विधियां हैं। एक विधि तो है प्रत्यक्ष रूप से जाकर व्यवस्था का निरीक्षण करना और दूसरी विधि है गुप्त रूप से अथवा अकस्मात् रूप से किसी स्थान पर जाना और फिर वहां की सब अवस्था को देखना और समझना।

हे राजन्! जब तू प्रथम व्यवस्था के

सब सत्य को देख, जांच व परख कर, इन में से ही अपना गवाह भी चुनकर जब तू अच्छा करने वाले को पुरस्कृत करेगा तो वह पुरस्कार देश के लोगों को एक दिशा देगा, एक मार्ग दर्शन देगा और तेरे राज्य के लोग पुरस्कार प्राप्त करने के लिए सदा अच्छा ही अच्छा करने का, शुभ ही शुभ करने का विचार करेंगे। वह सत्य बोलेंगे, सत्य ही करेंगे तथा सत्य ही सुनेंगे। इससे तेरे राज्य को बल मिलेगा, तेरे राज्य को स्थायित्व मिलेगा और तेरा यह राज्य लम्बे समय के लिए स्थिर हो जावेगा। कोई अन्दर या बाहर का शत्रु इस ओर देख ही नहीं पावेगा।

अनुसार अपने राज्य के किसी दूरस्थ स्थान पर निरीक्षण के लिए जाता है तो अपने चाटुकार लोग तुझे घेर लेते हैं। ये चाटुकार तुझे सत्य अवस्था के दर्शन होने ही नहीं देते। जहाँ कहीं कोई कमी होती है उसे ये चाटुकार लोग जानते होते हैं, अनेक बार तो यह हानि होती ही इन चाटुकार लोगों के कारण है। इसलिए वह छल-बल से अथवा साम-दाम से तुझे उस स्थान पार जाने ही नहीं देते और इस कारण उन कमियों का, उन दोषों का तुझे पता ही नहीं चल पाता। हाँ! कुछ समय के लिए, मात्र तेरी उपस्थिति तक सब व्यवस्था दुरुस्त कर दी जाती है और तेरे यहाँ से जाते ही फिर कुव्यवस्था हो जाती है। इस प्रकार सत्य का तुझे पता ही नहीं चल पाता किन्तु प्रजा को जो दुःख मिलता है, उसका प्रतिकार प्रजा तेरे से ही चाहेगी। इससे तेरी हानि होगी।

प्रजा के सुख दुःख की ठीक अवस्था को जानने के लिए दूसरा उपाय उत्तम है। या तो किसी भी स्थान पर अकस्मात् चले जाना अथवा छदम् रूप धारण कर जाना। इससे किसी को पता तक नहीं चलेगा कि उनके आस पास कहीं देश का राजा भी खड़ा है। जब तेरी उपस्थिति का किसी को ज्ञान तक न होगा तो वह स्वाधीन होकर अपने अच्छे व बुरे कार्य करेंगे। इन अच्छे या बुरे कार्यों को तू अपनी आंख से देखेगा, अपने कानों से सुनेगा और स्पष्ट अनुभव करेगा। सब सत्य साक्षात् रूप में तेरे सामने होगा।

सब सत्य को देख, जांच व परख कर, इन में से ही अपना गवाह भी चुनकर जब तू अच्छा करने वाले को पुरस्कृत करेगा तो वह पुरस्कार देश के लोगों को एक दिशा देगा, एक मार्ग दर्शन देगा और तेरे राज्य के लोग पुरस्कार प्राप्त करने के लिए सदा अच्छा ही अच्छा करने का, शुभ ही शुभ करने का विचार करेंगे। वह सत्य बोलेंगे, सत्य ही करेंगे तथा सत्य ही सुनेंगे। इससे तेरे राज्य को बल मिलेगा, तेरे राज्य को स्थायित्व मिलेगा और तेरा यह राज्य लम्बे समय के लिए स्थिर हो जावेगा। कोई अन्दर या बाहर का शत्रु इस ओर देख ही नहीं पावेगा।

इस के उलट जिन लोगों को तू अपने राज्य क्षेत्र में बुराई फैलाते देखेगा, जिन लोगों को देश की व्यवस्था बिगाड़ते हुए देखेगा तो इन के गवाह रूप लोगों को भी तू अपनी बुद्धि से इन के बीच में से ही चुन लेगा तथा इस प्रकार के बुरे कार्य करने वालों को जब तू सब के सामने लाकर दण्डित करेगा तो इन बुरे लोगों का साहस समाप्त हो जावेगा तथा भविष्य में जो बुरा करने की कोई इच्छा अपने अन्दर लिए होंगे तो उनमें भी बुराई करने की शक्ति न रहेगी, साहस नहीं रहेगा ओर देश में कोई बुरा करने वाला, देश को हानि देने वाला, प्रजा का ह्रास करने वाला कोई न रहेगा। इससे तेरा देश निरंतर उन्नति की ओर अग्रसर होगा। जब देश उन्नति की ओर होगा तो देश में अनेक भामाशाह भी पैदा होंगे जो देश की उन्नति के लिए अपने धन से तेरा सहयोग करेंगे। इससे विकास के मार्ग खुल जावेंगे। देश और इस देश की जनता तीव्र गति से विकास को साथ लेकर आगे बढ़ेगी और तेरा देश एक दिन सोने की चिड़िया बन जावेगा।

इसलिए राजा के लिए यह आवश्यक होता है कि वह अपनी प्रजा के विशिष्ट लोगों को, जिन्होंने उसे चुना होता है, को साथ ले कर दूर-दूर तक जावे तथा दूर-दूर तक निवास करने वाली अपनी प्रजा को मिले, उसकी अवस्था को जाने, उसके दिल को पहचाने तथा उनके सुख-दुःख को देवे। उनके सुखों को बढ़ाने के तथा उनके दुःखों को दूर करने के उपाय करे तो निश्चय ही प्रजा उस राजा पर अपनी जान तक भी न्योछावर करने को तैयार हो जावेगी। सब प्रजा तुझे अपने निवास पर निमंत्रण देगी क्योंकि अब तू न केवल राजा ही रह गया है अपितु प्रजा का मित्र, प्रजा का रक्षक तथा प्रजा का माता व पिता भी बन गया है। सब लोग तुझे आदर करेंगे तथा तेरे साथ बैठ कर यज्ञ आदि करेंगे, विचार विमर्श करेंगे, सुख-दुःख की चर्चा कर सब सत्य से तुझे अवगत करेंगे।

इसलिए राजा का प्रजा से मिलना-जुलना राज्य के हित में ही है और तेरी स्थिरता का भी एक सुन्दर उपाय हैं।

104 शिप्रा अपार्टमेन्ट,
कौशाम्बी 201010 (गाजियाबाद)
चलभाष 09718528068

आज भी आर्य समाज ही चाहे तो बचा सकता है

महात्मा कहलाने को उतावले मोहनदास करमचद गांधी जी के पाखंडपूर्ण (बेढंगे, अव्यवहारिक) विचारों-व्यवहारों से क्षुब्ध होकर बड़ा बेटा हीरालाल जब अपने पत्नी-परिवार को छोड़कर शराबी-मांसाहारी भी हो गया और इतने पर भी उसे संतोष न हुआ तो वह मुसलमान अब्दुल्ला भी बन गया, इसाई लोग उसे सर्वाधिक प्रलोभन देते तो वह इसाई ही बनता।

पुत्र के इस तमाशे से दुखी होकर लिखे गये देवी कस्तूरबा और गांधी जी के मार्मिक पत्रों से भी न तो हीरालाल स्वधर्म में लौटा और न कोई गांधी के मुस्लिम मित्र ही उसे घर वापसी को तैयार हुए। बल्कि गांधी जी को भी मुस्लिम बनके अपने सुपुत्र का हमसफर हो जाने की ही आवाज उठाने लगे।

इससे काफी शर्मींदगी झेल रहे सत्याग्रह और दुराग्रह का मिश्रित प्रयोग करने वाले गांधी जी जिस आर्य समाज (हिंदुओं की सुख्यात वेदवादी-बुद्धिवादी संस्था) की प्रशंसा के बजाय आलोचना ही किया करते थे, वही मुंबई का आर्यसमाज अंधकूप में गिरे हीरालाल को 14.11.1936ई. में शुद्धि करके अंधकार से प्रकाश में लाकर वेदपथ का हमराही बना सका।

यानि हिंदूवाद को कौन कहे, गांधीवाद भी गर्त में जब-जब फंसा है, तब-तब हमारे वेदवाद ने ही उबारा है। पाखंडों के भीषण दलदल में फंसते जा रहे हिंदु धर्म को आज भी आर्यसमाज ही चाहे तो पुनः बचा सकता है।

आर्य प्रहलाद गिरि
निंगा, आसनसोल (प. बं.)

मूर्तिपूजा और महर्षि दयानन्द

● मनमोहन कुमार आर्य

हमारा देश अनेक मत–मतान्तरों का देश है। प्रायः सभी मत ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि संसार में ईश्वर के एक होने पर भी सभी मतों में उसके स्वरूप की मान्यतायें व उपासना पद्धतियां भिन्न–भिन्न हैं। इसका कारण क्या है? क्या सभी मतों की ईश्वर के स्वरूप, गुण–कर्म–स्वभाव आदि के बारे में सभी मान्यतायें उचित व सत्य हैं? हमारी वैदिक मान्यताओं के अध्ययन, चिन्तन व मनन के अनुसार वेदेतर मतों की मान्यतायें उचित व सत्य न होकर ईश्वर का पूर्ण सत्य स्वरूप केवल वेदों एवं वैदिक साहित्य में ही उपलब्ध होता है। इनका सत्य स्वरूप वही है जैसा कि वेद व वैदिक साहित्य के ग्रंथों उपनिषद, दर्शन आदि में पाया जाता है। मत–मतान्तरों में ईश्वर का जो स्वरूप व उपासना पद्धतियां उपलब्ध होती हैं वह उन–उन मतों के प्रवर्तकों के देश, काल एवं उनके अपने निजी ज्ञान मुख्यतः अल्पज्ञता व विचार शक्ति के अनुसार सत्यासत्य का मिश्रण है। जिन दिनों ये मत अस्तित्व में आये उन दिनों संसार में ज्ञान व विज्ञान अपनी पतनावस्था व विकासशील अवस्था में थे। इसी कारण सभी मतों में जिनमें हमारे देश का पौराणिक मत, बौद्ध व जैन मत आदि भी सम्मिलित हैं, सभी इससे प्रभावित हुए हैं। खोज व अनुसंधान करने पर ज्ञात होता है कि ईश्वर का सत्य स्वरूप केवल वेदों में ही पाया जाता है जिसका उल्लेख उपनिषदों, मनुस्मृति व दर्शनों आदि ग्रंथों के साथ कुछ–कुछ गीता, वाल्मीकी रामायण एवं महाभारत में भी पाया जाता है। ईश्वर के सम्बन्ध में उन दिनों स्पष्ट ज्ञान न होने के कारण अज्ञानता से ही मूर्तिपूजा का प्रचलन हुआ। आज के इस लेख में हम मूर्तिपूजा व महर्षि दयानन्द के विचारों को प्रस्तुत कर रहे हैं जो सत्य की कसौटी पर पूर्णतया खरे हैं और साथ ही सार्वकालिक व सार्वभौमिक भी हैं।

महर्षि दयानन्द जी ने अपने समय में जो धार्मिक अध्ययन व अनुसंधान किये, उसमें उन्होंने पाया कि मूर्ति पूजा जैन मत से आरम्भ हुई है। जैनियों ने मूर्तिपूजा कहां से चलाई तो उसका कारण यही है उन्हें सत्य वैदिक ईश्वर पूजा वा ईश्वरापासना का ज्ञान न होने से अपनी अल्पज्ञता व अज्ञानता से चलाई। जैनियों कि इस धारणा की शान्त ध्यानावस्थित बैठी हुई मूर्ति को देखकर अपने जीव वा आत्मा का भी शुभ परिणाम वैसा ही होता है, इसका उत्तर देते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि जीव चेतन है और मूर्ति जड़ है। क्या मूर्ति के सदृश जीव भी जड़ हो जायेगा? महर्षि दयानन्द ने दूसरा प्रश्न किया है कि शाक्त मतानुयायी आदि ने मूर्तियों में जैनियों का अनुकरण नहीं किया क्योंकि जैनियों की मूर्तियों के सदृश वैष्णव–शाक्त आदि की मूर्तियां नहीं हैं। इसका समाधान करते हुए महर्षि दयानन्द कहते हैं कि यदि शाक्त आदि जैनियों के तूल्य मूर्तियां बनाते तो, समानता होने के कारण, जैनमत में मिल जाते अर्थात् इनमें व जैनमत में कोई अन्तर ही न होता। इसलिये जैनों की मूर्तियों से विरूद्ध अपनी मूर्तियां बनाईं, क्योंकि जैनों से विरोध करना इनका काम और इन से विरोध करना उनका अर्थात् जैनमतानुयायियों का मुख्य काम था। जैसे जैनों ने मूर्तियां नंगी, ध्यानावस्थित और विरक्त मनुष्य के समान बनाई हैं, उन से विरुद्ध वैष्णवादि ने यथेष्ट श्रृंगारित व स्त्री के सहित रंग–रास–भोग विषयासक्ति सहिताकार खड़ी और बैठी हुई बनाई हैं। जैनी लोग बहुत से शंख, घण्टा, घड़ियाल आदि बाजे नहीं बजाते। ये वैष्णव व शाक्त लोग बड़ा कोलाहल करते हैं। तब तो ऐसी लीला के रचने से वैष्णवादि सम्प्रदायी पोपों के चेले जैनियों के जाल से बच के इन की लीला में आ फंसे **और व्यासादि महर्षियों के नाम से मनमानी से बहुत से असम्भव गाथायुक्त ग्रन्थ (18 पुराणादि) बनाये। उनका नाम पुराण रखकर कथा भी सुनाने लगे और फिर ऐसी–ऐसी विचित्र माया रचने लगे कि पाषाण की मूर्तियां बनाकर गुप्त कहीं पहाड़ या जंगलादि में धर आये वा भूमि में गाड़ दीं। पश्चात् अपने चेलों में प्रसिद्ध किया कि मुझ को रात्रि को स्वप्न में महादेव, पार्वती, राधा, कृष्ण, सीता, राम या लक्ष्मी, नारायण और भैरव, हनुमान आदि ने कहा है कि हम अमुक–अमुक ठिकाने पर हैं। हम को वहां से ला, मन्दिर में स्थापन कर और तू ही हमारा पुजारी होवे तो हम मनोवांछित फल देवें।**

अब **'आंख के अन्धे और गांठ के पूरे'** लोगों ने पोप जी की लीला सुनी तब तो सच ही मान ली और उनसे पूछा कि ऐसी वह मूर्ति कहां पर है? तब तो पोप जी बोले कि अमुक पहाड़ वा जंगल में है, चलो मेरे साथ दिखला दूं। तब तो वे अन्धे उस धूर्त के साथ चल के वहां पहुंच कर देखे। आश्चर्य होकर उस पोप के पग में गिर कर कहा कि आपके ऊपर इस देवता की बड़ी कृपा है। अब आप ले चलिये और हम मन्दिर बनवा देवेंगे, उस में इस देवता की स्थापना कर आप ही पूजा करना और हम लोग भी इस प्रतापी देवता के दर्शन पर्सन करके मनोवांछित फल पावेंगे। **जब एक ने लीला रची तब तो उस को देख सब पोप लोगों ने अपनी जीविकार्थ छल कपट से इसी प्रकार से मूर्तियां स्थापन कीं।**

मूर्तिपूजा के पक्ष में पौराणिक यह प्रश्न करते हैं कि जब परमेश्वर निराकार है तो वह ध्यान में नहीं आ सकता। अतः इसलिये अवश्य मूर्ति होनी चाहिये। भला जो कुछ भी नहीं करे, यदि वह मूर्ति के सम्मुख जा, हाथ जोड़ परमेश्वर का स्मरण करते और नाम लेते हैं तो इसमें क्या हानि है? इस प्रश्न का उत्तर महर्षि दयानन्द अपने विस्तृत वैदिक ज्ञान के आधार पर देते हुए बताते हुए हैं कि जब परमेश्वर निराकार व सर्वव्यापक है, तब उस की मूर्ति ही नहीं बन सकती **और जो मूर्ति के दर्शनमात्र से परमेश्वर का स्मरण होवे तो परमेश्वर के बनाये पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति आदि अनेक पदार्थ, जिन में ईश्वर ने अद्भुत रचना की है, क्या ऐसी रचनायुक्त पृथिवी व पहाड़ आदि परमेश्वर रचित महामूर्तियां कि जिन पहाड़ आदि से वे मनुष्यकृत मूर्तियां बनती हैं, उन को देख कर परमेश्वर का स्मरण नहीं हो सकता?** जो तुम कहते हो कि मूर्ति के देखने से परमेश्वर का स्मरण होता है, तुम्हारा यह कथना सर्वथा मिथ्या है और जब वह मूर्ति सामने न होगी तो परमेश्वर के स्मरण न होने से मनुष्य एकान्त पाकर चोरी व जारी आदि कुकर्म करने में प्रवृत्त भी हो सकता है। क्योंकि वह जानता है कि इस समय यहा मुझे कोई नहीं देखता, इसका दण्ड उसे कर्मफल व्यवस्था से नहीं मिलेगा, इसलिये वह अनर्थ करे बिना नहीं चूकता। इत्यादि अनेक दोष पाषाणादि मूर्तिपूजा करने से सिद्ध होते हैं।

आगे महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि अब देखिये! जो पाषाणादि मूर्तियों को न मानकर सर्वदा सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी परमात्मा को सर्वत्र जानता और मानता है वह पुरुष सर्वत्र, सर्वदा परमेश्वर को सब के बुरे भले कर्मों का द्रष्टा जानकर एक क्षण मात्र भी परमात्मा से अपने को पृथक न जान के कुकर्म करना तो दूर किन्तु मन से कुचेष्टा भी नहीं कर सकता। क्योंकि वह जानता है, कि जो मैं मन, वचन और कर्म से भी कुछ बुरा काम करूंगा तो इस अन्तर्यामी ईश्वर के न्याय से बिना दण्ड पाये कदापि न बचूंगा। नामस्मरण मात्र से स्मर्त्ता को कुछ भी फल नहीं होता जैसा कि मिशरी–मिशरी कहने से मुंह मीठा और नीम–नीम कहने से कड़ुवा नहीं होता किन्तु जीभ से चखने ही से मीठा या कड़ुवापन जाना जाता है। इसी प्रकार से सत्य नाम के स्मरण के साथ तथावत् कर्म करना भी परमावश्यक है।

इस पर पौराणिक पक्ष का उल्लेख कर उन्होंने लिखा है कि क्या नाम लेना वा स्मरण करना सर्वथा मिथ्या है और सर्वत्र पुराणों में तो नामस्मरण का बड़ा माहात्म्य लिखा है? इसका उत्तर देते हुए महर्षि दयानन्द जी कहते हैं कि नाम लेने की तुम्हारी रीति उत्तम नहीं है। जिस प्रकार तुम नामस्मरण करते हो वह रीति झूठी है। तुम्हारी रीति वेद के विरुद्ध है। सत्य व वेदविहित रीति के अनुसार नामस्मरण इस प्रकार से करना चाहिये– **जैसे न्यायकारी ईश्वर का एक नाम है। इस नाम से जो इस का अर्थ है कि जैसे पक्षपातरहित होकर परमात्मा सब का यथावत् न्याय करता है वैसे उस का ग्रहण कर न्याययुक्त व्यवहार सर्वदा करना, अन्याय कभी न करना इस प्रकार एक नाम से भी मनुष्य का कल्याण हो सकता है।** मूर्तिपूजा के समर्थन में पौराणिक सनातनधर्मी लोग एक यह तर्क भी देते हैं कि हम भी जानते हैं कि परमेश्वर निराकार हैं परन्तु उस ने शिव, विष्णु, गणेश, सूर्य और देवी के शरीर धारण करके राम, कृष्णादि अवतार लिये। इससे उनकी मूर्ति बनती है, क्या यह भी बात झूठी है? महर्षि दयानन्द इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि हां–हां झूठी है। क्योंकि **'अज एकपात्, 'अकायम्'** इत्यादि विशेषणों से परमेश्वर को जन्ममरण और शरीरधारणरहित वेदों में कहा है तथा युक्ति से भी परमेश्वर का अवतार कभी नहीं हो सकता क्योंकि जो आकाशवत् सर्वव्यापक, अनन्त और सुख–दुःख व दृश्यादि गुणरहित है वह एक छोटे से वीर्य, गर्भाशय और शरीर में क्योंकर आ सकता है? आता जाता है वह है कि जो एकदेशीय अर्थात् एक स्थान पर हो तथा अन्यत्र न हो। और जो अचल, अदृश्य, जिस के बिना एक परमाणु भी खाली नहीं है, उसका अवतार कहना, जानो वन्ध्या के पुत्र का विवाह कर उसके पौत्र के दर्शन करने की बात कहना है।

इसी प्रकार से महर्षि दयानन्द ने मूर्तिपूजा से सम्बन्धित अन्य सभी प्रकार के प्रश्नों को स्वयं प्रस्तुत कर उनका युक्ति व प्रमाणों सहित खण्डन किया है। उनके इस विद्वतापूर्ण मानवहितकारी कार्य को कोई भी शुद्ध हृदय का व्यक्ति पढ़कर जान व समझ सकता है। वह अपने विवेक व आत्म प्रेरणा से मूर्तिपूजा सदा सर्वदा के लिए छोड़कर सच्चिदानन्द, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, कर्मफल दाता, मोक्ष प्रदाता ईश्वर की उपासना आदि व वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय में स्वयं को अर्पित कर जीवन के उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति में सफलता देने वाले अन्य साधनों को प्रयोग में लाकर अपने जीवन को सफल कर सकता है। हम आशा करते हैं कि पाठक महर्षि दयानन्द जी के मूर्तिपूजा विषयक तर्कों पर राग–द्वेष–अज्ञान–स्वार्थ आदि से मुक्त होकर शुद्ध मन से विचार करेंगे और उनके ग्रन्थों सहित वेदादि का अध्ययन कर सत्य को अपनायेंगे और असत्य का परित्याग करेंगे।

196 चुक्खूवाला–2,
देहरादून–248001

पत्र/कविता

"पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश"

पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश,
यह है, मन के मैलों को साफ करने की एक उत्तम साबुन।
रखो इसके ऊपर निष्भ्रम पूर्ण विश्वास,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड और भ्रम
दुर्गुण, दुर्व्यसन, इसके पढ़ने से पड़ जाते हैं नर्म।
है यह संजीवनी बूटी, रखो सदा अपने पास,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

है यह महर्षि दयानन्द कृत, चारों वेदों का सार,
लिखी इसमें जीवन उन्नत बनाने की सभी सामग्री।
और सभी महत्वपूर्ण बातें, जो हैं, खास–खास,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

महर्षि ने लिखा इसे, करने मानव–मात्र का हित,
पढ़ो और इसके अनुसार चलो, कभी न होगा तुम्हारा अहित।
बन जाओगे तुम इतने महान्, जितना महान् आकाश,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

जीवन की परीक्षा में, यदि होना है तुम्हें पास,
परिवार तुम्हारा सुखी बने, न आवे कभी खट्टास।
तो हमको पढ़ने का, कभी न छोड़ो अभ्यास,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

इसके पढ़ने से, बनेगा तुम्हारा जीनव सुखी और पवित्र
स्वास्थ्य, सुबुद्धि, यय, सम्पन्नता, बनेंगे तुम्हारे मित्र।
कभी न पढ़ने से, कोई क्रिया छुट गई, ऐसा हो आभास,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

यह ग्रन्थ अमूल्य है, लिखे इसमें मुक्ति पाने के सभी मार्ग और नाम,
यदि धर्म के अर्थ किया काम किया तो मिलेगा निश्चित ही मोक्ष धाम।
इसकी शिक्षाओं से बढ़ते ही जाओगे, न होगा तुम्हारा काम भी हास्य,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

गुरुदत्त, श्रद्धानन्द, विस्मिल ने पढ़ा था सत्यार्थ प्रकाश,
महात्मा नारायण स्वामी ने किया प्रतिबन्ध हटवाने का सद्प्रयास।
जीवन उनका बदल गया, बन गये उसी के दास,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

यह सद्ज्ञान का पुञ्ज है, करता सत्य का ही प्रकाश,
इस आलौकिक ग्रन्थ को, पढ़ने की लगी रहे तुम्हें प्यास।
सब को पढ़ने की लगन लगी रहे, 'खुशहाल रखता है यही आश,
पढ़ो सत्यार्थ प्रकाश, जब भी मिले तुम्हे अवकाश।

खुशहाल चन्द्र आर्य
180 महात्मा गांधी रोड, दो तल्ला
कोलकत्ता–700007
मो. 9830135794

तेलंगाना स्थापना की प्रथम वर्षगांठ पर प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट-एक प्रतिक्रिया

हैदराबाद रियासत का नवाब 1947 में पाकिस्तान में रियासत का विलय चाहता था या स्वतन्त्र देश के रूप में रहना चाहता था। वह कट्टर मुस्लिम था। रियासत की 90 प्रतिशत हिन्दू उसके व्यवहार से दुखी थे। आर्य समाज और हिन्दू महासभा ने सत्याग्रह करके जेल भरो आन्दोलन शुरु कर दिया जिसका जनता ने खुलकर समर्थन और सहयोग किया।

अनकूल वातावरण देखकर लौह पुरुष सरदार पटेल ने पुलिस कारवाई कर दी जिसके फलस्वरुप 2–3 दिन में नवाब/निजाम को झुकना पड़ा और उसने रियासत का विलय भारत में कर दिया। 23 जिलों का तेलगू भाषी राज्य आन्ध्र प्रदेश के नाम से बनाया गया जिसकी राजधानी हैदराबाद बनी। पुराने शहर में मुस्लिम ज्यादा हैं और नए शहर में हिन्दुओं का बहुमत है। 41 वर्ष पूर्व 10 जिलों का तेलगांना नाम से राज्य बनाने की मांग दिन प्रति दिन बढ़ती गई। अंत में कांग्रेस ने 2 जून 2014 को तेलगांना बना दिया। तेलगांना की सरकार में एक मुस्लिम को उपमुख्यमंत्री बनाया गया।

तेलगांना सरकार ने पहली भाषा के रुप में उर्दू का विकल्प प्रदान किया है जबकि ऐसी सुविधा अन्य राज्यों में कहीं नहीं है। राज्य की सरकारी भाषा तेलगू है। यह सुविधा असम्वैधानिक भी हो सकती है। तेलगांना में सभी कल्याराकारी योजनाओं के लिए 27000 करोड़ रु की राशि दी है। फिर धर्म और जाति के आधार पर 20 योजनाएँ अलग से क्यों चला रखी हैं? यह कार्य धर्म निरपेक्षता के विरुद्ध है।

योजनाएं मुस्लिमों – बी.सी. और ईसाईयों के लिए क्यों हैं? सवर्णों का क्या दोष है? उन्हें ऐसी योजनाओं से वंचित क्यों रखा गया है? जो समाज अभी भी पुरानी मानसिकता रखता है उसके लिए 18 प्रकार की योजनाएँ क्यों हैं? बात बात पर झगड़ता है। आक्रामक सोच व प्रवत्ति का है। अपनी अलग पहचान बनाने में लगा रहता है। बम फटने अथवा ऐसी घटना करने वालों को सहयोग करता है उन्हें मालामाल क्यों किया जा रहा है?

एम. आई. एम. मुस्लिम लीग जैसी है इसी पार्टी का वहाँ प्रभाव है जिसके नेता आवेसी हैं जो जहर उगलते हैं। ऐसे तत्वों के साथ सख्ती का व्यवहार किया जाना चाहिए। आर्य समाज और हिन्दू महासभा के कार्यकर्त्ताओं का न तो आभार व्यक्त किया गया है और न ही उनके कार्यो को स्मरण किया है। क्या देश भक्त होना अपराध है? तेलंगाना सरकार की मोहर की पृष्ठभूमि में चार मीनारें दिखाई गई हैं जो निजाम की गुलामी की प्रतीक हैं। वास्तव में वहां आर्य समाज या सरदार पटेल की फोटो होनी चाहिए थी। अंग्रेजी – तेलगू और उर्दू में तेलंगाना सरकार लिखा है जबकि अंग्रेजी – तेलगू और हिन्दी में तेलगांना सरकार लिखा होना चाहिए था।

हैदराबाद का पुराना नाम भाग्यनगर था अतः वही नाम पूरे शहर का रखा जाए अथवा पुराने शहर का नाम हैदराबाद और नए शहर का नाम भाग्यनगर रखा जाए।

मुस्लिम समाज रुढ़िवादी है। वह समय के साथ बदलने को कम तैयार है। केन्द्र में कांग्रेस ने मुस्लिमों के लिए 20 योजनाएँ चला रखी थीं। 7 योजनाएं भाजपा ने और शुरू कर दी हैं। तेलगांना सरकार ने विभिन्न प्रकार की 20 योजनाएँ शुरू की हैं इस प्रकार मुस्लिमों को 20+7+20=47 प्रकार की योजनाओं से लाभान्वित किया जा रहा है जबकि वे निजाम समर्थक थे और देश भक्त आर्य समाजियों तथा हिन्दू महासभाईयों को भुला दिया गया है। ऐसा क्यों ? उनके प्रति आभार भी व्यक्त नहीं किया गया है।

मेरा आर्य समाज और हिन्दू महासभा के केन्द्रीय नेताओं से निवेदन है कि वे मुख्यमंत्री से मिलें और ज्ञापन देकर बताएं कि निजाम को हटाने में उनकी कितनी प्रमुख भूमिका रही थी और अल्पसंख्यकों की 20 योजनाएं बन्द कर दें। उन्हें विशेष महत्व क्यों दिया जा रहा हैं?

आई. डी. गुलाटी
18/86, टीचर्स कॉलोनी,
बुलन्दशहर–203001

****

☞ पृष्ठ 07 का शेष

गृहस्थाश्रम को स्वर्ग ...

करें और वे वृद्धावस्था तक जीने वाले हों।

शास्त्रों में गृहस्थ को एक आश्रम कहा गया है। यह एक मंजिल है। मंजिल तक पहुंचने के लिए खड़े रहने से काम नहीं चलता, मंजिल की तरफ चलना पड़ता है। सप्तपदी का अभिप्राय यही होता है कि वर-वधू को इस बात की प्रतीति कराई जाती है कि गृहस्थाश्रम आराम से बैठे रहने का नाम नहीं है। इस आश्रम के कुछ उद्देश्य हैं, प्रयोजन हैं। इन प्रयोजनों को सिद्ध करने के लिए अलग-अलग नहीं एक साथ चलना होगा, कदम से कदम मिलाकर चलना होगा, तभी वे इस आश्रम के उद्देश्य को पा सकेंगे। तभी तो ऋग्वेद में कहा है :

"ओ३म् समञ्जन्तु विश्वेदेवाः समापो हृदयानि नौ।

सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ।।"

हम दोनों पति-पत्नी निश्चयपूर्वक तथा प्रसन्नतापूर्वक यह घोषणा करते हैं कि हम दोनों के हृदय जल के समान सदा शान्त रहें। जैसे प्राणवायु हमको प्रिय है वैसे हम दोनों एक दूसरे के साथ प्रसन्न रहेंगे। जैसे धारण करने वाला परमात्मा सबमें मिला हुआ सब जगत् को धारण करता है, वैसे हम दोनों एक दूसरे को धारण करते रहेंगे।

गृह्य सूत्र में लिखा है :-

ओ३म् यदेतद् हृदयं तव तदस्तु हृदयं मम्।

यदिदम् हृदयं मम तदस्तु हृदयं तव।।

जो तेरा हृदय है वह मेरा हृदय हो जाये और जो मेरा हृदय है वह तेरा हृदय हो जाये।

ओ३म् मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनुचित्तं ते अस्तु।

मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्।।

हमारा एक दूसरे के साथ श्रेष्ठ व्यवहार हो। हमारा चित्त एक दूसरे के अनुकूल हो। प्रजापति ने हमें एक-दूसरे के साथ नियुक्त किया है। हमें इसका सफल निर्वाह करना है।

विवाह का उद्देश्य तो जीवन के आदर्श को पूर्ण करने के लिए एक साधन मात्र है। जीवन का आदर्श सब प्राणियों में अपनापन अनुभव करना है। इसलिए विवाह में पति-पत्नी में मित्रता, सखा-भाव जरूरी है, नहीं तो विवाह का प्रधान उद्देश्य पूरा नहीं होता।

स्त्री-पुरुष में तो प्रेम स्वाभाविक है, इसे सीखने के लिए किसी विद्यालय में नहीं जाना पड़ता। स्त्री तथा पुरुष के इसी स्वाभाविक प्रेम को प्राणिमात्र तक ले जाने के एक कठिन काम को आसान बनाने का प्रयत्न गृहस्थाश्रम द्वारा किया जाता है। इसी प्रेम का, मैत्री भाव का आगे विस्तार करना है। विवाह में यही प्रेम, सखाभाव ही एक ऐसा तत्त्व है जिसे संकुचित क्षेत्र से निकलकर हम विस्तृत क्षेत्र में विकसित करना चाहते हैं।

गृहस्थाश्रम में अपनेपन का केन्द्र अपने से हटकर दूसरों में जाना प्रारम्भ हो जाता है। स्वार्थ का अंश पर्दे की ओट में चला जाता है और उसकी जगह परार्थ का भाव सामने आने लगता है। अतः यह बड़ी जिम्मेदारी का आश्रम है।

आत्मा के अपने आदर्श लक्ष्य तक पहुंचने का, उसके पूर्ण रूप से विकसित होने का यही उपाय है। ब्रह्मचर्यावस्था 'स्व' की उन्नति से प्रारम्भ होती है। इस आश्रम में 'स्व' या 'अपने' आपका उत्थान प्रमुख होता है, ब्रह्मचारी अपने इर्द-गिर्द ही घूमता है। परन्तु जब वह अपने 'स्व' को दृढ़ बन चुका होता है तब उसे अपनी आत्मा को अधिक विकसित करने को कहा जाता है तो वह गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है। ब्रह्मचर्य आश्रम अपने तक सीमित होता है परन्तु गृहस्थ आश्रम अपने से हटकर सन्तानों तक विस्तृत होता ही है। वह पूरे समाज में अपने आपको विस्तृत कर देता है। गृहस्थाश्रम आत्मिक विकास की एक सीढ़ी है, यह सभी आश्रमों का पालक, पोषक एवं सहयोगी है। तभी तो इस आश्रम को स्वर्ग-प्राप्ति का माध्यम माना गया है। महर्षि मनु की स्पष्ट घोषणा है-

अनेन विप्रो वृत्तेन वर्तयन् वेदशास्त्रवित्।

व्यपेत कल्मषो नित्यं ब्रह्मलोके महीयते।।

(4.260)

अर्थात्- जो वेद शास्त्रों को पढ़ने वाला गृहस्थ शास्त्रोक्त कर्तव्यों का पालन करता है वह पाप रहित जीवन स्वर्ग अथवा मोक्ष के आनन्द को प्राप्त करता है।

4/44, शिवाजी नगर,
गुड़गाँव, हरियाणा

दाम्पत्य का आधार वैदिक वर्ण व्यवस्था

● सूरजमल त्यागी

दाम्पत्य जीवन का प्रारम्भिक कारण रूप सौन्दर्य होता है। जिस का मूल आधार प्रेम है। परन्तु रूप सौन्दर्य तो प्रेम का ढक्कन है। वास्तव में रुप और प्रेम में इतना अन्तर है जितना खटाई और खाँड में होता है खटाई और खाँड मिलने से सरसता उत्पन्न होती है। खटाई -खाकर जीवन नहीं चलता। प्रेम-माधुर्य के लिए सहयोग,त्याग, समर्पण, क्षमा तथा गुण-कर्म-स्वभाव का संयोग अनिवार्य है। रुप-सौन्दर्य क्षणिक सुख तो उत्पन्न करता है किन्तु उस में प्रेम-माधुर्य का अभाव रहता है।

वैदिक दर्शन में दाम्पत्य जीवन, प्रेम-माधुर्य और दाम्पत्य, सुख के लिए, गुण-कर्म-स्वभाव की अनिवार्यता है। पति और पत्नी का चयन करने की स्वतन्त्रता है। जिसमें माता-पिता सहयोग करते हैं। कन्या की स्वीकृति को प्रथम मान्यता होती है। किसी परिस्थितिजन्य, विवशता से, लोक लाज, जुगाड़ से पति-पत्नी बनकर लम्बे समय तक भी जुड़े तो रह सकते हैं। परन्तु गुण-कर्म-स्वभाव योग्यता के अभाव में लम्बे समय तक जुड़े रहना उसका एक गुण हो सकता है, इसके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। मकान में सुविधा जनक दरवाजे, खिडकियाँ, रोशनदान, झरोखे भी होने चाहिए। मकान उपयुक्त सुविधाओं से युक्त हो। मकान में सीलन टूटन से घुटन न हों। सूरज की रोशनी, चाँद की रोशनी भी आती हो। मकान सैकड़ों वर्षो से खड़ा है। परन्तु अपने आश्रितों का दम-घोटता रहा और स्वास्थ्यप्रद, सुखद नहीं रहा है। यह मकान की कौन सी प्रशंसनीय बात है। चयन की स्वतन्त्रता,परिपक्व अवस्था में प्रेम, माधुर्य के साथ सुखद जीवन जीने, परिवार, समाज, राष्ट्र के निर्माण में योगदान देने के लिए वैदिक विवाह की वर्ण व्यवस्था का विधान किया गया है।

रूप सौन्दर्य पर आधारित प्रेम विवाह माधुर्ययुक्त सुखद नहीं होते। सौन्दर्य का आवेश आयु के साथ ढ़ल जाता है। आर्थिक सुविधाएं किसी कारण से समाप्त भी हो जाती हैं। विवाह की औपचारिक प्रतिज्ञाएँ, जरा-जरा से मन-मुटाव से, कैदी की हथकड़ी के समान लगने लगती हैं। स्वतन्त्र चयन में, गलती ओर धोखा-धड़ी किसी भी पक्ष से हो सकती है। अति-स्वतन्त्रता भी उच्छृंखला में बदल जाती है। आँखों पर गान्धारी की काली पट्टी बँध जाती है। रूप-सौन्दर्य का नशा, उतर जाता है। तब भगाए या भागें, अथवा अलग हो जाएं ही परिणाम होता है। सफल, सुखद, मधुर दाम्पत्य के लिए वैदिक वर्ण व्यवस्था एक मात्र उपाय है वर और वधु को अपने समान वर्ण के, अपने ही गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार, स्वयं चयन करना चाहिए। अप्राप्य की प्राप्ति, के लिए परिवार, समाज, राष्ट्र के निर्माण के लिए, रूप सौन्दर्य के ढक्कन से आगे बढ़कर, व्रतपति, व्रत पत्नी बनना चाहिए। एक कुशल बढ़ई अपने लकड़ी के टुकड़ों के जोड़ को जैसे मिला देता है। वैसे ही अपने त्याग, सहयोग, संकल्प और समर्पण के कौशल से एक दूसरे में विलीन, विलुप्त कर देना चाहिए। वेदानुसार वर्णव्यवस्था से ब्राह्मणी कुलीन युवती रूप सौन्दर्य को ही नहीं देखती। विद्या, गुण उस का व्रत होता है। काले, कलूटे, भदरंग तथा गुणवान ऋषि अष्टावक्र में, विद्याव्यसन का गुण दिखाई दिया। रूप की उपेक्षा कर, कोई ब्राह्मणी रूप हीन, धन हीन, एक तपस्वी, विद्या व्रतपति को अपना इष्टदेव स्वीकार कर लेती है। क्षत्रिय कन्या रूप को नहीं देखती। वह आन, बान, शान और तलवार के धनी का वरण करती है। राजपूत वीरागंना हाड़ी रानी ने पति की शान में अपना मुँड स्वंय काट कर भेंट कर दिया था। वैश्य युवती, श्रीमान् दान-मान के धनी, सेठ (श्रेष्ठ महाजन) की उपासना करती है। वह किसी कन्जूस और कृपण के रूप को नहीं देखती। जगत् में शान-मान-दान और श्रम की पूजा-उपासना होती है।

एक स्वाभाविक प्रश्न है कि क्या कोई समझदार कन्या, दुर्बल युवक को अपना पति चुनेगी! क्या वह ऐसे पुरूष के बच्चों की माँ बनना पसन्द करेगी, जो एक थप्पड में गिर पड़े। कोई भी पति जो शरीर से बलवान और बुद्धि से हीन हो और जरा-जरा से मत-भेद पर बल का सहारा लेता हो? उससे घर में अशान्ति-कलह-भय व्याप्त होता है। क्षत्रिय प्रबल हो, परन्तु गुणवान भी हो, तभी वह न्यायकारी होगा। शरीर से कमजोर और विद्या से भरपूर, तपस्वी को देवता मान कर उपासना की जा सकती है। चयन प्रक्रिया के समय युवती, युवक से एक प्रश्न पूछती है। 'भवान्! आपमें कौन-सा विशेष गुण है? अर्थात् ज्ञान-मान-दान है, जिससे मैं आपको स्वीकार कर सकूँ। अब प्रत्येक शादी के इच्छुक युवकों को किसी वर्ण की योग्यता, विवाह से पूर्व सिद्ध करनी, कितनी अनिवार्य हो जाती हैं? अतः प्रत्येक युवक-युवती को इस प्रश्न का उत्तर खोजना है कि हमने दाम्पत्य के लिए कौन-सी योग्यता प्राप्त कर ली है?

अतः वैदिक वर्ण-व्यवस्था, युवकों, गृहस्थों समाज की कायाकल्प करने का वेदविदित उपाय है। वर्ण व्यवस्था साधारण को असाधारण तथा विशिष्ट बना देती है। मानव का चहुँमुखी कायाकल्प हो जाता है। जिसका आधार शान, मान, बल, धन और श्रम है। वर्तमान में कर्मचारी प्रथम,द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ श्रेणी के हैं। वर्ण व्यवस्था कर्मणा है, जन्मना नहीं है गुणवाचक है, जाति वाचक नहीं है। समझ से सम्यक गति करने वाला समुदाय ही समाज है। जिसका मूलाधार स्तम्भ-वैदिक दाम्पत्य ही है।

(पूर्व प्राचार्य)
जड़ौदा हाउस - कोटा

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 16-17 \9 \2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39 \57

डी.ए.वी. कुमारगंज में पौधारोपण कार्यक्रम सम्पन्न

नरेन्द्र देव डी.ए.वी. सीनियर सेकेण्डरी स्कूल कुमारगंज, फैजाबाद (उ.प्र.) में पौधारोपण कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम का उद्घाटन नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद के माननीय कुलपति प्रौफेसर अख्तर हसीब ने किया। अपने उद्बोधन में माननीय कुलपति ने बताया कि पौधे हमारे जीवन साथी हैं। यदि पौधों को रोपित नही किया जायेगा तो हमारा जीवन ही खतरे में पड़ जायेगा। पौधे ही वातावरण को संरक्षित करते हैं, प्रदूषित होने से बचाते हैं और हमें स्वस्थ रखते हैं। ये पौधे हवा में घुलित कार्बनडाइआक्साइड को अपनी खुराक बनाकर हमें आक्सीजन प्रदान करते हैं। इनसे ही वर्षा होती है, अगर आज हम नहीं चेते तो भविष्य में पानी का अकाल पड़ जायेगा और अगला विश्व-युद्ध पानी के लिए ही होगा।

इस शुभावसर पर विद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. ओ.पी.मिश्र ने अपने वक्तव्य में कहा कि प्रकृति हमारी स्वामिनी है। आज के दौर में ग्लोबल वार्मिंग से बचने का मात्र एक उपाय यही है कि अधिक से अधिक पौधारोपण कर धरती को हरा-भरा रखा जाय। उन्होंने सभा में उपस्थित सभी लोगों को पौधों की उचित देख-भाल करने की शपथ दिलायी तथा विद्यालय के प्रत्येक बच्चे से अपने जन्मदिन के शुभवसर पर कम से कम एक पौधा रोपित करने का वचन लिया। वर्तमान सत्र में आम्रपाली के 251 पौधों को रोपित करने का लक्ष्य रखा गया है।

इस शुभवसर पर कुमार गंज के विभिन्न महाविद्यालयों के प्राचार्य तथा राष्ट्रीय विद्यापीठ इण्टर कालेज पिठला के प्रधानाचार्य डॉ. रमेश मिश्र, एवं शिक्षण्क श्री रामदास सिंह जी, कृषि विश्वविद्यालय के डीन करदम, डॉ. उमेश चन्द्रा, डॉ. गिरिजेश, डॉ. आर.ए. सिंह, डॉ. आर.पी. सिंह श्री आर. के. सिंह (सुरक्षाधिकारी), डॉ. शिल्पा त्रिपाठी, डॉ. नीरज यादव, समाजसेवी श्री सुरेन्द्र सिंह जी, शिवपुरी पी.जी. कालेज के प्रबन्धक श्री दानबहादुर पाण्डेय एवं विद्यालय के वरिष्ठ शिक्षक श्री मोहन सिंह, डॉ. राजेश श्रीवास्तव, श्री सुनील अग्रहरी, श्री करणधीर सिंह, श्री

उपाध्याय, श्री अमित कुमार पाण्डेय, श्री अभिषेक श्रीवास्तव, श्री शैलेन्द्र श्रीवास्तव, श्रीमती के.पाल, श्रीमती पूनम सिंह, श्रीमती विधि पाण्डेय, सुधा पाण्डेय।

डी.ए.वी. साहिबाबाद में संस्कृत भाषा सप्ताह

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, साहिबाबाद में देववाणी एवं वेदों की भाषा संस्कृत के संवर्धन एवं युवा वर्ग में इसके प्रति अभिरुचि उत्पन्न करने हेतु संस्कृत भाषा महोत्सव सप्ताह का आयोजन किया गया। राष्ट्रपति सम्मान से सम्मानित तथा वर्तमान में संस्कृत अकादमी, दिल्ली के उपाध्यक्ष एवं संस्कृत भाषा विद् डॉ. गणेश दत्त शर्मा जी मुख्य वक्ता के रूप में कहा ''अनेक भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा हमारी सांस्कृतिक विरासत है, हमारी पहचान है। वर्तमान व्यावसायिक युग मे संस्कृत भाषा विद्वानों, विशेषज्ञों तक ही सिमट कर रह गई। आज आवश्यकता है संस्कृत के विभिन्न आयामों पर फिर से नवीन ढंग से अनुसंधान करने की, इसके प्रति जनमानस में जागृति लाने की विशेषकर युवा पीढी में इसे पुनः शिरोधार्य करने की प्रेरणा जागृत करने की।'' केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बार्ड द्वारा विद्यालयों से संस्कृत भाषा सप्ताह का आयोजन करने का निर्देश दिया गया था। इस उद्देश्य की पूर्ति एवं संस्कृत भाषा के विकास हेतु विद्यालय में कविता रचना, निबन्ध लेखन एवं संस्कृत श्लोक

अंत्याक्षरी आदि प्रतियोगिता का अयोजन करवाया गया। आमंत्रित थे। 'एक संवाद' के अंतर्गत विद्यार्थियों ने मुख्य वक्ता श्री गणेश दत्त शर्मा जी से संस्कृत भाषा के संबंध में अपनी अनेक जिज्ञासाओं एवं समस्याओं का समाधान किया।

प्रधानाचार्य श्री वी.के चोपड़ा जी ने मुख्य अतिथि डॉ. गणेश दत्त शर्मा जी का अभिनंदन किया तथा अपने संबोधन में कहा कि संस्कृत भाषा हमारी अमूलय धरोहर है डी.ए.वी. संस्थाओं ने संस्कृत भाषा के शिक्षण पर विशेष बल देकर अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सक्रिय कदम उठाये हैं। युवा पीढ़ी में इसके प्रति अभिरुचि ही हमारी सांस्कृतिक उन्नति का पर्याय बन सकती है।

कार्यक्रम का समापन शांतिपाठ के सस्वर वाचन द्वारा किया गया।

डी.ए.वी. पक्खोवाल रोड लुधियाना में वैदिक परम्परा से सम्पन्न हुआ रक्षाबंधन

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, पक्खोवाल रोड, लुधियाना में रक्षाबंधन महोत्सव मनाया गया। उत्सव का शुभारंभ यज्ञ-अग्निहोत्र से किया गया। यज्ञ में त्रैकालिक ताप शान्ति के लिए गायत्री महामंत्र व महामृत्युंजय आदि मंत्रों से विशेष आहुतियाँ दी गईं जिसमें छात्रों ने ओ३म्, गायत्री महामंत्र, वेदों की ओर चलें तथा वैदिक धर्म की जय की राखियाँ बनाईं।

विद्यालय परिसर में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी महोत्सव भी आयोजित किया गया। इसके अन्तर्गत के.जी विग के छात्रों ने सुन्दर झांकियाँ प्रस्तुत कीं। उन्होंने श्रीकृष्ण के जीवन की विभिन्न घटनाओं को दर्शाया। सभी छात्रों ने इसमें बड़े उत्साह से भाग लिया।

प्रधानाचार्य डॉ. मोहन लाल शर्मा जी ने सभी छात्रों और अध्यापकों को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी की बधाई दी और श्रीकृष्ण के जीवन का प्रदर्शन करने वाली इन सुंदर झांकियों की सराहना की।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक - **पूनम सूरी**